शैक्षिक मंथन

(द्विभाषी मासिक)

शैक्षिक क्षेत्र की प्रतिनिधि पत्रिका

वर्ष : 9 अंक : 3 1 अक्टूबर 2016

(आश्विन-कार्तिक, विक्रम संवत् 2073)

संरक्षक
मुकुन्द कुलकर्णी
प्रो.के.नरहरि

❖

परामर्श
डॉ. विमल प्रसाद अग्रवाल
प्रो. जगदीश प्रसाद सिंघल

❖

सम्पादक
प्रो. सन्तोष पाण्डेय

❖

उप सम्पादक
विष्णुप्रसाद चतुर्वेदी
भरत शर्मा

❖

संपादक मंडल
प्रो. नन्दकिशोर पाण्डेय
डॉ. नाथू लाल सुमन
डॉ. एस.पी. सिंह
डॉ. ओमप्रकाश पारीक

❖

प्रबन्ध सम्पादक
महेन्द्र कपूर

❖

व्यवस्थापक
बजरंग प्रसाद मजेजी

प्रेषण प्रभारी
बसन्त जिन्दल
नौरंग सहाय भारतीय
कार्यालय प्रभारी
आलोक चतुर्वेदी : 9782873467

प्रकाशकीय कार्यालय
82, पटेल कॉलोनी, सरदार पटेल मार्ग,
जयपुर (राज.) 302001
दूरभाष : 9414040403

दिल्ली ब्यूरो :
शैक्षिक महासंघ सदन, 606/13,
कृष्णा गली नं.9, मौजपुर, दिल्ली-110053
दूरभाष : 011-22914799

E-mail :
shaikshikmanthan@gmail.com
Visit us at :
www.shaikshikmanthan.com

एक प्रति 20/– वार्षिक शुल्क 200/–
आजीवन (दस वर्ष) 1500/-

पृष्ठ संयोजन : सागर कम्प्यूटर, जयपुर

शैक्षिक मंथन मासिक
में प्रकाशित सामग्री से संपादक मण्डल
का सहमत होना आवश्यक नहीं है।

आंतरिक प्रदूषण से शिक्षा में महँगाई ❑ प्रो. मधुर मोहन रंगा

महँगी होती शिक्षा के लिए एक कारक जिम्मेदार नहीं है। आवश्यकता है कि हम अपनी सोच में परिवर्तन करें, आज माता-पिता महँगे स्कूलों में पढ़ाना, कोचिंग पर भेजना, अंग्रेजी माध्यम की शिक्षण संस्थाओं में बच्चों को प्रवेश कराना ''स्टेटस-सिम्बल'' बन गया है। देश में अनेक उदाहरण हैं जहाँ शासकीय शिक्षण संस्थाओं में पढ़ने वाले बालकों ने विभिन्न क्षेत्रों में उत्कृष्टता प्राप्त की है। भारी-भरकम फीस देकर, भारतीय परिधान का त्याग कर पश्चिम के परिधान का आकर्षण हमारी आंतरिक प्रदूषण की प्रवृत्ति को इंगित करता है। अतः आवश्यकता इस बात की है कि शासकीय शिक्षण संस्थाओं में बालकों को अध्ययन हेतु भेजें, स्वयं उसका ध्यान करें।

अनुक्रम

4.	असमानता को बढ़ाती मँहगी शिक्षा	– सन्तोष पाण्डेय
7.	ब्राण्डेड होती शिक्षा	– विष्णु प्रसाद चतुर्वेदी
9.	शिक्षा का न हो व्यापारीकरण	– डॉ. रेखा भट्ट
12.	व्यापार बनती जा रही है शिक्षा	– बजरंगी सिंह
17.	निवेश से महँगी होती शिक्षा	– बजरंग प्रसाद मजेजी
22.	Youth Icon Dr.Manjul Bhargava	– Er.Hemendra Nagar
24.	शिक्षा की नींव, प्राथमिक शिक्षा	– अजय नावरिया
26.	भाषा : राष्ट्र की आत्मा	– प्रकाश वया
29.	काफी कुछ होना बाकी	– अरविंद जयतिलक
31.	संविधान की आत्मा को पहचानें	– साकेन्द्र प्रताप वर्मा
35.	गतिविधि	

When Saraswati becomes Lakshmi

❑ Dr. TS Girishkumar

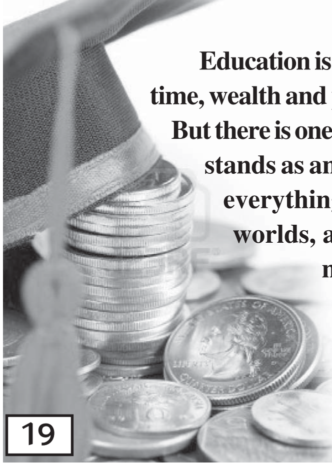

Education is holy and spiritual for us, and at the same time, wealth and property is also spiritual and holy for us. But there is one thing to all, and that is Dharma. Dharma stands as an all embracing umbrella, bearing upon everything, and influencing everything. In other worlds, all legitimate steps should bear the unmistakable mark of Dharma, and it should be onlythrough Dharma that everything ought to be done.Anything, when performed through Dharma shall essentially be divine, and shall automatically take one to Moksha.

असमानता को बढ़ाती मँहगी शिक्षा

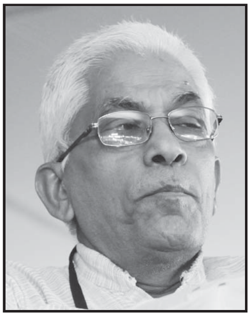

शिक्षा केवल बायोलोजीकल प्राणी को सामाजिक प्राणी बनाने, संस्कारित करने व नैतिक रूप से परिपूर्ण बनाने साधन ही नहीं है वरन आज शिक्षा आर्थिक उन्नति, आय सृजित करने, आय का प्रवाह प्रदान करने, महिला, निर्धन व वंचित वर्ग के सशक्तीकरण का अमोघ अस्त्र है। भारतीय वैदिक संस्कृति एवं ज्ञान का अपने उत्कर्ष से अधोपतन का प्रमुख कारण शिक्षा के अधिकार को समाज के बहुत ही छोटे से वर्ग तक सीमित करना रहा है। भारतीय समाज की आश्रम प्रणाली आधरित जाति व्यवस्था ने आज के कमजोर व वंचित वर्ग को शिक्षा की सुविधा से वंचित रखा, परिणाम भारतीय समाज ने अपनी जीवन्तता, गतिशीलता व प्रगतिशीलता खो दी, इसके दुष्परिणामों को आज भी देश भोग रहा है।

❑ **सन्तोष पाण्डेय**

संपादकीय

देश आज जिन जटिल समस्याओं से जूझ रहा है उनमें से एक निरन्तर मँहगी होती शिक्षा है। नि:संदेह देश में तीव्रगति से बढ़ती कीमतों का असर शिक्षा में प्रयुक्त सभी आगतों (input) पर पड़ा जिसके कारण शिक्षा में प्रवेश, परीक्षा, पाठ्यपुस्तकों, किताब-कापियों, खेल सामग्री सहित सभी की लागत बढ़ने से शिक्षा का मँहगा होना स्वाभाविक है। परन्तु जिस गति से शिक्षा मँहगी हुई है, क्या वह केवल इन आगतों का परिणाम है? उत्तर स्पष्ट नहीं है। देश में जब से वैश्विक एकीकरण की दृष्टि से किये आर्थिक उदारवाद के चलते, सरकार ने शिक्षा में निजी उद्यम को बड़ी भागीदारी के लिये खोला, शीघ्र ही वह सेवा के मिशन को त्याग कर लाभदायक उद्यम की ओर अग्रसर हो गया। देश में तीव्र आर्थिक प्रगति का एक स्वाभाविक परिणाम यह हुआ कि बेहतर भविष्य के लिये शिक्षा पर प्रत्येक परिवार अधिक व्यय करने लगा है। समाज का कमजोर व वंचित वर्ग भी अपने बच्चों को श्रेष्ठतम रोजगार सुनिश्चित करने वाली शिक्षा सुविधा उपलब्ध कराना चाहता है। परिणाम अनेक तड़क-भड़क व तामझाम से युक्त स्कूलों, विद्यालयों, महाविद्यालयों, विश्वविद्यालयों की बाढ़ आई हुई है। तीव्र प्रतिस्पर्धा के युग में कोचिंग संस्थानों के मकड़जाल ने शिक्षा को मँहगा बनाने में प्रारंभिक योग दिया परन्तु चतुर वर्ग द्वारा यह अनुभव करने पर कि जन आकांक्षाओं का शोषण कर लाभ कैसे कमाया जा सकता है? शिक्षा संस्थानों की शृंखला प्रारम्भ कर दी। धनी सम्पन्न व उच्च मध्यम वर्ग भी भारी वेतनरूपी आय प्रदान करने वाले रोजगार के अवसरों का लाभ उठाने के लिये भारी भरकम फीस के साथ-साथ कैपीटेशन फीस भी भरने को तैयार हो गया। इसने शिक्षा को महँगा करने में अपना योग दिया। आज निजी मेडीकल कॉलेज की फीस एक करोड़ तक पहुँच चुकी है। इंजीनियरिंग में उफान थोड़ा कम हुआ है, परन्तु वे भी ऊँची फीस को कम करने के लिए तत्पर नहीं हैं। परन्तु क्या मँहगी शिक्षा के और कारण नहीं हैं? आर्थिक विकास के साथ सभी वर्ग 'स्टेटस' के प्रति जागरुक हुए हैं। उनके लिये स्टेटस सिंबल की बात है कि वे बच्चों को बहुत

उच्च ब्राण्ड मूल्य वाले स्कूलों, विद्यालयों व उच्च शिक्षण संस्थानों में पढ़ायें। स्टेटस की इस दौड़ में निम्न मध्यम वर्ग भी शामिल हो चुका है, जिससे महँगी तथाकथित पब्लिक स्कूलों की बाढ़ आई हुई है जहाँ, फीस, ड्रेस, डेवलपमेंट फीस, और भी अनेकानेक भारी भरकम फीस तो लेते ही हैं साथ ही अनिवार्य ड्रैस, जूते, किताबें-कापियाँ, प्रिंटिंग व अन्य शैक्षणिक-अशैक्षणिक गतिविधियों में कमीशन खोरी आदि भी शिक्षा को महँगा बनाने में योग देती है? सरकारी स्कूलों, कॉलेजों व विश्वविद्यालयों की निम्न कोटि का व कमियों से भरपूर बनाने की धारणा को भी इन्हीं शिक्षा माफियों ने पुष्ट किया है। यद्यपि सरकारी उदासीनता व साधनों का समुचित प्रयोग नहीं करने के साथ-साथ राजनीतिक हस्तक्षेप तथा कर्तव्यों के प्रति उपेक्षा भाव से परिपूर्ण शिक्षक वर्ग ने भी इस छवि निर्माण में भरपूर योग दिया है। शिक्षा को मँहगा बनाने में विश्वविद्यालयों, माध्यमिक शिक्षा बोर्डों जैसी अन्य संस्थाओं ने भी योग दिया है। मान्यता के लिये निरीक्षण शुल्क व संबद्धताशुल्क, परीक्षा शुल्क इत्यादि सभी में अत्प्रत्याशित वृद्धि हुई है। शिक्षा से संबंधित सभी शुल्क ही नहीं बढ़ाये गये हैं वरन भ्रष्टाचार के नये स्रोत भी पनपे हैं। सीक्रेसी के नाम पर परीक्षा व्यवस्था में करोड़ों का खेल होता है। शिक्षक-शिक्षा का हाल तो और भी बेहाल है। ऐसे में देश कैसे सभी को शिक्षा में समानता के अवसर दे पायेगा। चिन्ता का विषय है।

शिक्षा केवल बायोलोजीकल प्राणी को सामाजिक प्राणी बनाने, संस्कारित करने व नैतिक रूप से परिपूर्ण बनाने साधन ही नहीं है वरन आज शिक्षा आर्थिक उन्नति, आय सृजित करने, आय का प्रवाह प्रदान करने, महिला, निर्धन व वंचित वर्ग के सशक्तीकरण का अमोघ अस्त्र है। भारतीय वैदिक संस्कृति एवं ज्ञान का अपने उत्कर्ष से अधोपतन का प्रमुख कारण शिक्षा के अधिकार को समाज के बहुत ही छोटे से वर्ग तक सीमित करना रहा है। भारतीय समाज की आश्रम प्रणाली आधरित जाति व्यवस्था ने आज के कमजोर व वंचित वर्ग को शिक्षा की सुविधा से वंचित रखा, परिणाम भारतीय समाज ने अपनी जीवन्तता, गतिशीलता व प्रगतिशीलता खो दी, इसके दुष्परिणामों को आज भी देश भोग रहा है। भारतीय संविधान ने यद्यपि सभी को समानता के अधिकार की गारंटी दी है। प्रत्यक्षत: समानता का अधिकार तो सुरक्षित है परन्तु मँहगी होती शिक्षा ऐसे भारत के निर्माण की ओर अग्रसर है जिसमें आर्थिक रूप से निरन्तर समृद्ध होता वर्ग ही श्रेष्ठ शिक्षा से लाभांवित हो सकेगा। बहुसंख्यक जन समुदाय जो गरीब, कमजोर, पिछड़ा व वंचित तथा निम्न मध्यम वर्ग का है, वह समूह जो वास्तविक भारत की आत्मा है, इस श्रेष्ठ शिक्षा से वंचित रहेगा। ऐसे में क्या भारत का इतिहास पुन: अपने को नहीं दोहरायेगा जहाँ केवल एक सीमित वर्ग श्रेष्ठ व गुणवत्तापूर्ण शिक्षा से लाभान्वित हो सकेगा। वास्तव में शिक्षा सर्वसुलभ होनी चाहिये, इसके लिये माँग के अनुरूप ही शिक्षा व्यवस्था का विस्तार होना चाहिये। यह सुनिश्चित

किया जाना चाहिये कि धन के अभाव में कोई योग्य व्यक्ति गुणवत्तापूर्ण शिक्षा से वंचित नहीं रहे। सरस्वती पर लक्ष्मी हावी नहीं हो पाये। सरस्वती अर्थात शिक्षा व्यक्तिगत उत्थान, सामाजिक प्रगति आर्थिक व सांस्कृतिक उत्थान का माध्यम बनी रहनी चाहिये। सरस्वती पर लक्ष्मी उसी समय हावी होने लगी जबसे सरकार ने अनुभव किया कि भारत जैसे विशाल देश में सभी को श्रेष्ठ व गुणवत्तापूर्ण शिक्षा उपलब्ध कराने में सरकार असमर्थ है, उसके पास पर्याप्त संसाधनों का अभाव है, एतदर्थ सभी को श्रेष्ठ गुणवत्तापूर्ण शिक्षा उपलब्ध कराने में समाज अर्थात् निजी उद्यम व उनके संसाधनों का उपयोग आवश्यक है। यहाँ यह स्मरण रखना होगा कि भारत में सदैव सामर्थ्यवान वर्ग ने भामाशाह का रोल निभाया है। यह वर्ग साधन प्रदाता तो रहा परन्तु कभी भी शिक्षा का संचालक, प्रबंधक व नियंत्रणकर्ता नहीं रहा। शिक्षा को मानव व समाज सेवा का सर्वोत्तम मार्ग मानते हुये मिशन के रूप में अपनाया। शिक्षा का संचालन, नियंत्रण व प्रबंधन गुरु, शिक्षक व शिक्षाविदों तक ही सीमित रहा। संभवत: इसी सोच के अन्तर्गत निजी उद्यम को शिक्षा में प्रवेश की अनुमति मिली। निरन्तर सशक्त होती शिक्षा लॉबी ने इस मिथक को ध्वस्त कर शिक्षा को लक्ष्मी के हवाले कर दिया। इस स्थिति से उबरने का एकमात्र मार्ग सरस्वती को लक्ष्मी के प्रभाव से मुक्त कराने में ही निहित है।

यह भी सत्य नहीं है कि सरकारी शिक्षण संस्थानों में सदैव ही स्तरहीन शिक्षा दायित्वहीन शिक्षकों द्वारा दी जाती है, नवोदय विद्यालय व केन्द्रीय विद्यालय संगठन द्वारा संचालित केन्द्रीय विद्यालय इस बात के प्रमाण हैं कि अच्छी शिक्षा सरकारी शिक्षण संस्थानों में दी जा सकती है। आवश्यकता है आवश्यक संसाधन जुटाने तथा सतर्क प्रबंधन की इसके अलावा शिक्षा में राजनीतिक दलों को भी अपनी-अपनी सोच से मुक्त करना होगा। सभी निजी उद्यम द्वारा संचालित शिक्षण संस्थानों को लाभ की वृत्ति से युक्त मानना भी उपयुक्त नहीं होगा। वास्तव में शिक्षण संस्थानों के सुव्यवस्थित संचालन के लिये उपयुक्त तो यह होगा कि कोई ऐसी व्यवस्था बनायी जाय जो बढ़ती मँहगाई के अनुरूप ही उनके द्वारा ली जाने वाली फीस का निर्धारण कर सके। सी.बी.एस.ई. ने संवद्ध विद्यालयों में फीस निर्धारण के नियम बनाने का निर्णय किया है। राजस्थान सरकार ने हाल ही फीस को नियंत्रित करने का कानून बनाया है, उससे प्राप्त अनुभवों से संपूर्ण भारत लाभान्वित हो सकता है। निजी उद्यम शिक्षण संस्थानों की शृंखला बनाने की दृष्टि से भी फीस निर्धारण में अंश रख सकता है। इसके अतिरिक्त लिया गया कोई भी शुल्क व राशि जो कि प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से ली जाये, आर्थिक अपराध की श्रेणी में आनी चाहिये। सर्वोच्च न्यायालय के हस्तक्षेप से प्री नर्सरी में ली जाने वाली भारी डोनेशन की राशि पर नियंत्रण लगाया जा सका है। समस्या शिक्षा से निजी उद्यम को बाहर करने की नहीं है, वरन उनका उपयोग सरकार के नियंत्रण व पर्यवेक्षण में करने की है। स्वायत्तशासी सार्वजनिक शिक्षण संस्थानों में भी शुल्क ढाँचे को आसानी से मँहगा कर भारी बोझ अभिभावक वर्ग पर डाल दिया जाता है। संबद्धता व मान्यता देने के प्रकरणों में लक्ष्मी के प्रभाव सरस्वती के साथ रोका जाना आवश्यक है। सर्वोच्च न्यायालय द्वारा अनेक ऐसे कदम उठाये गये हैं। जिनसे छात्र व अभिभावक वर्ग को भारी लाभ मिला है।

प्रवेश के लिये राष्ट्रीय स्तर पर एक ही परीक्षा आयोजित कराना ऐसा ही एक कदम है। शिक्षा व्यवस्था में अनावश्यक खर्चों पर रोक लगाने तथा शैक्षिक सुधार संबंधी कार्यक्रम निरन्तर जारी रहने चाहिये। शिक्षा को सर्वसुलभ श्रेष्ठ एवं गुणवत्तापूर्ण बनाने में स्वतंत्र अर्द्धन्यायिक नियामकीय व्यवस्था की वैधानिक व्यवस्था काफी कुछ सुधार ला सकती है और शिक्षा के मँहगे होने की गति पर भी रोक लगा सकती है। जैसे वित्तीय क्षेत्र को व्यवस्थित करने में सेबी जैसे नियामक ने बड़ा योग दिया है। पेंशन रेग्यूलेटरी तंत्र व संचार के क्षेत्र में ट्राई ने भारी योग दिया है। शिक्षा के क्षेत्र में ऐसे ही स्वतंत्र व अर्द्धन्यायिक नियामक आयोग का गठन कर सुखद परिणाम की अपेक्षा की जा सकती है। यूजीसी, एमसीआई व अन्य ऐसी संस्थाओ के निष्प्रभावी होने की भी जाँच अपेक्षित है। इन सबके बावजूद सरकार की सक्रिय भूमिका महत्त्वपूर्ण बनी रहेगी। आर्थिक प्रगति के साथ-साथ शैक्षिक उत्थान व उद्देश्य प्राप्ति के लिये सरकार को शिक्षा पर व्यय अनिवार्यत: बढ़ाना ही होगा और किसी भी पात्र व्यक्ति को श्रेष्ठ व गुणवत्तापूर्ण शिक्षा से वंचित न हो के लिये व्यापक एवं सर्वसुलभ छात्रवृत्ति एवं कम ब्याज की सरल ऋण योजना अपनानी होगी। शिक्षा के संसाधन जुटाने की दृष्टि से प्रधानमंत्री द्वारा राष्ट्रीय शिक्षा कोष स्थापित किया जा सकता है, जिसमें धनी व निर्धन सभी शिक्षा के लिये दान कर सकें। इस पुनीत कार्य में शैक्षिक संस्थानों के भूतपूर्व छात्र भी महती भूमिका निभा सकते हैं। शिक्षा के लिये दान की परंपरा को पुष्ट किया जाना स्वागत योग्य होगा। ❑

ब्राण्डेड होती शिक्षा

ज्ञान का युग कहलाने वाले इस दौर में मध्यवर्गीय परिवारों में हर कोई अपने बच्चों को ऊँची शिक्षा दिलाना चाहता है। इसके लिए वह अपने बच्चों को देश के सब से बेहतर शिक्षा संस्थान में ही नहीं, विदेश में भी भेजने की इच्छा रखता है। शिक्षा का उद्देश्य बच्चे को संस्कारित बनाना नहीं होकर मोटे वेतन वाली नौकरी पाना हो गया है। शिक्षा के बाजार में ऊँची डिग्रियाँ खरीदना मध्यवर्ग के लिए मुश्किल हो रहा है। भारत में शिक्षा के मँहगी होने का एक बड़ा कारण अंग्रेजी माध्यम के विद्यालयों को अच्छी शिक्षा का पर्याय मान लिया गया है। अंग्रेजी माध्यम के नाम पर अभिभावक अपनी हैसीयत से अधिक शिक्षा पर खर्च करने को तैयार रहता है। आज गाँव और गली में तथाकथित अंग्रेजी माध्यम विद्यालयों की बाढ़ आ रही है। देश में यह आम धारणा बनती जा रही है कि अंग्रेजी माध्यम विद्यालय में पढ़े बिना बच्चे का कोई भविष्य नहीं है।

❑ **विष्णुप्रसाद चतुर्वेदी**

जीवविज्ञान की दृष्टि से मानव भी एक जानवर ही है। आज भी मानव एक जानवर के रूप में ही पैदा होता है। सद् शिक्षा ही मानव को इंसान बनाती है, उसे सामाजिक संस्कार देकर उसे मानव समाज में रहने के योग्य बनाती है। प्रश्न यह कि जब मँहगी होती ब्राण्डेड: शिक्षा मानव को मनुष्य के रूप में संस्कारित करने के बजाय उसे पैसा कमाने की मशीन में बदलने लगे तो समाज का क्या होगा? हजारों वर्षों के इतिहास को पार कर संस्कृति के रूप में जीवन मूल्यों की जो धरोहर खड़ी की है उस धरोहर का क्या होगा? संस्कृति की धरोहर के ढ़हने से संस्कारित मानव क्या पुन: आदि मानव नहीं बन जाएगा?

मँहगी होती प्रारम्भिक शिक्षा

प्राचीनकाल की तुलना में आज शिक्षा का परिदृश्य एकदम बदल गया है। शहरों में लोगों की नींद प्रात: स्कूल बसों के बेसुरे होर्नों की आवाज से खुलती है। बसों के बेसुरे होर्नों के बजने का कारण सुबह-सुबह बच्चों का समय पर तैयार नहीं हो पाना होता है। छोटे बच्चों के लिए जब सबसे अच्छी नींद का समय होता है तब माँ उन्हें बिस्तर से निकाल कर किसी मँहगें स्कूल की बस में डालने का प्रयास करती है। पहले शिशुशिक्षा घरों में दादा-दादी या नाना-नानी के संरक्षण में या मुहल्ले की किसी पाठशाला में स्वत: हो जाया करती थी। आज बस, स्कूल फीस और ट्यूशन के नाम पर बहुत कुछ खर्च किया जाता है। घन्टों बस में गुजारने की तकलीफ बच्चों को भोगनी होती है उस पर किसी का ध्यान नहीं जाता। 71 वें राष्ट्रीय प्रतिदर्श सर्वेक्षण के अनुसार शहरी क्षेत्रों में प्राथमिक शिक्षा ग्रामीण क्षेत्रों की तुलना में औसतन चार गुणा मँहगी हो गई है। व्यक्तिगत खर्च का अनुमान करना तो मुश्किल है, आजकल स्कूल भी ब्राण्डेड हो गए हैं, जितने बड़े ब्राण्ड का स्कूल उतने ही अधिक खर्च। बच्चे के स्कूल का ब्राण्ड परिवार की प्रतिष्ठा बन गया। बच्चे के भविष्य के नाम पर माँ-बाप अपनी हैसियत से अधिक खर्च शिक्षा पर कर रहे हैं। एसोचैम का एक सर्वे बताता है कि अधिकतर परिवारों में कमाई का 65 प्रतिशत

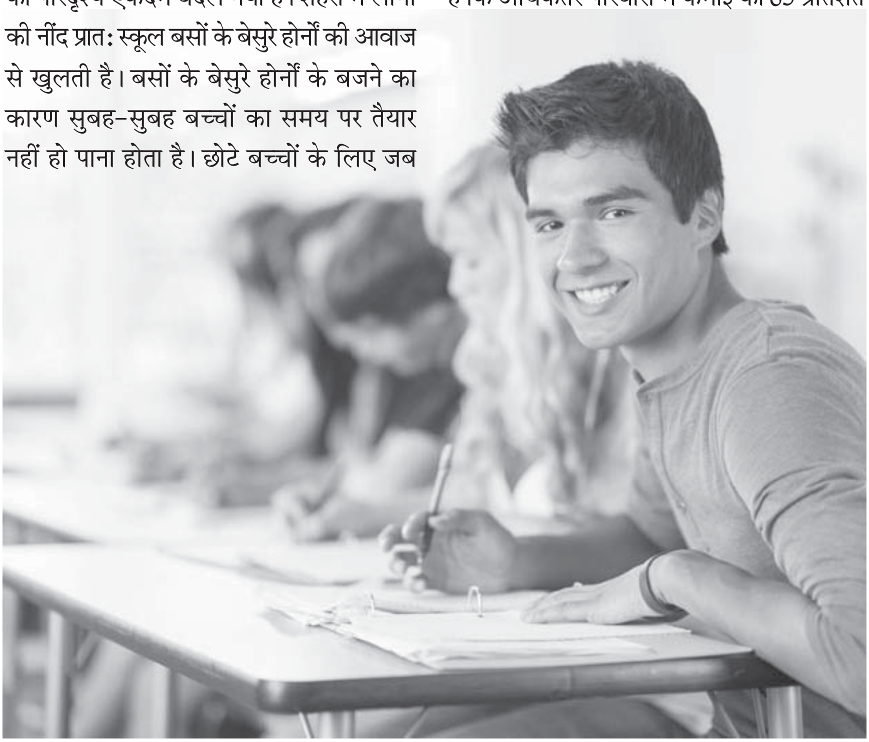

तक बच्चों की शिक्षा पर खर्च हो रहा है।

महिला सशक्तिकारण की बड़ी–बड़ी बातें की जाती रही है मगर 71 वें राष्ट्रीय प्रतिदर्श सर्वेक्षण से चौकाने वाला तथ्य सामने आया है कि स्नातक व अधिस्नातक करने वाली महिलाओं को साथ पढ़ने वाले पुरुषों की तुलना में अधिक खर्च करना पड़ता है। इसी तरह प्राइवेट इंजीनियरिंग कॉलेजों का खर्च करोड़ों रुपयों में आने लगा है। इनमें प्रवेश लेने वाले अधिकांश तो इस स्तर का अध्ययन करने की योग्यता भी नहीं रखते फिर भी इनको सफल घोषित करना प्राइवेट कॉलेजों की मजबूरी होती है।

अच्छी लगती है विदेशी शिक्षा

ज्ञान का युग कहलाने वाले इस दौर में मध्यमवर्गीय परिवारों में हर कोई अपने बच्चों को ऊँची शिक्षा दिलाना चाहता है। इसके लिए वह अपने बच्चों को देश के सब से बेहतर शिक्षा संस्थान में ही नहीं, विदेश में भी भेजने की इच्छा रखता है। शिक्षा का उद्देश्य बच्चे को संस्कारित बनाना नहीं होकर मोटे वेतन वाली नौकरी पाना हो गया है। शिक्षा के बाजार में ऊँची डिग्रियाँ खरीदना मध्यवर्ग के लिए मुश्किल हो रहा है। यह स्थिति भष्ट्राचार को जन्म देती है। अधिक खर्च होने के बाद भी बच्चा अपने परिवार की उम्मीदों के अनुरूप शैक्षिक उपलब्धि नहीं दिखा पाता तो निराश हो आत्महत्या का मार्ग अपनाता हैं। शिक्षा पाने के बाद भी नौकरी की गारंटी नहीं है। मोटी फीस लेकर भी शिक्षा संस्थान बच्चों को व्यवसाय करने योग्य नहीं बनाते। इसलिए शिक्षा आर्थिक संकट का कारण बनने लगी है।

भारत में शिक्षा के मँहगी होने का एक बड़ा कारण अंग्रेजी माध्यम के विद्यालयों को अच्छी शिक्षा का पर्याय मान लिया गया है। अंग्रेजी माध्यम के नाम पर अभिभावक अपनी हैसीयत से अधिक शिक्षा पर खर्च करने को तैयार रहता है। आज गाँव और गली में तथाकथित अंग्रेजी माध्यम विद्यालयों की बाढ़ आ रही है। देश में यह आम धारणा बनती जा रही है कि अंग्रेजी माध्यम विद्यालय में पढ़े बिना बच्चे का कोई भविष्य नहीं है। भारत के पास हिन्दी जैसी सशक्त भाषा व देवनागरी जैसी वैज्ञानिक लिपि है। देश स्वतन्त्र होने के साथ शिक्षा के माध्यम के रूप में हिन्दी व अन्य भारतीय भाषाओं के तेजी से विस्तार पाने की संभावना थी मगर हुआ उल्टा ही। देश स्वतन्त्र होने के बाद अंग्रेजी का वर्चस्व बढ़ता ही रहा है।

गलत सरकारी नीति

देश स्वतन्त्र होने के बाद हिन्दी ने अपने दमखम पर आशा से अधिक प्रगति की है। कभी हिंदी विरोध देश की राजनीति का प्रमुख बिंदु था किन्तु आज हिंदी देश की राजनीति की भाषा बनती जा रही है। आर्थिक क्षेत्र में तो हिंदी विश्व भाषा बनती जा रही है। आज विश्व में सर्वाधिक बोले जानी वाली भाषाओं में हिन्दी है, मगर भारत में शिक्षा की भाषा नहीं बन पाई है, इसका एक मात्र कारण यह है कि भारतीय प्रशासन के लोग षड्यन्त्रपूर्वक अंग्रेजी को पाले हुए हैं। इसी मानसिकता के चलते भारत में बच्चों की पाठ्यपुस्तकें अंग्रेजी में लिख कर बाद में भारतीय भाषाओं में अनुवाद किया जाता है। शिक्षा के माध्यम के रूप में अंग्रेजी की श्रेष्ठता के मिथक को तोड़ने का काम सरकार का है मगर सरकार तो उसे पुष्ट करने में लगी है। हिंदी माध्यम के विद्यालयों को सक्षम बनाने के बजाय सरकार अपने विद्यालयों में अंग्रेजी माध्यम से शिक्षा व्यवस्था को एक बड़ी उपलब्धि के रूप में गिनाने लगी है। अंग्रेजी माध्यम के मॉडल प्रस्तुत कर रही है। आत्मसात किया गया ज्ञान ही कुछ नया दे सकता है। दो चार प्रतिशत अति–मेधावी लोगों को छोड़ कर अन्य लोग ज्ञान को मातृभाषा में ही आत्मसात कर सकते हैं। हमें देश की प्रतिभा का सही उपयोग करना है तो मातृभाषा में हर प्रकार की उच्च–शिक्षा की पुख्ता व्यवस्था करनी होगी।

भारतीय सोच अपनाएँ

देश में शिक्षा मँहगी हो रही है मगर जब विश्व स्तरीय शिक्षा संस्थानों की बात आती है तो हमारे शिक्षा संस्थान दूर दूर तक नजर नहीं आते। इसका एक मात्र कारण यह कि सभी विश्वस्तरीय संस्थान अपने देश की शिक्षा मातृभाषा में देते हैं। विश्व में ऐसा कोई विकसित राष्ट्र नहीं जो विदेशी भाषा से आगे बढ़ा हो। भारत अंग्रेजी के माध्यम से विश्व शक्ति बनना चाहता है जो कभी संभव नहीं होगा। नालंदा व तक्षशिला के विश्वविद्यालय देश की भाषा में शिक्षा देने के कारण ही कम खर्च पर श्रेष्ठ शिक्षा के केन्द्र बन पाए थे। देश के स्वतन्त्र होने के बाद यदि हमने मातृभाषा में मौलिकता के साथ बाहरी ज्ञान को आत्मसात करने की नीति अपनाई होती तो आज अनेक विश्वस्तरीय शिक्षा संस्थान भारत में होते।

उद्योग चैंबर की एक रिपोर्ट के अनुसार, 4 लाख 50 हजार छात्र विदेशों में पढ़ाई पर 13 खरब रुपए खर्च कर रहे हैं। सब से अधिक छात्र अमेरिका में हैं। इसके बाद इंग्लैंड, आस्ट्रेलिया, कनाडा, न्यूजीलैंड, चीन, रूस आदि देशों में शिक्षा ग्रहण कर रहे हैं। यह पैसा देश में रहता तो बहुत अच्छा होता। मँहगी होती शिक्षा आज एक वैश्विक समस्या है। पश्चिम की सोच व भारत की सोच में अन्तर है। भारतीय सोच के अनुरूप चल कर ही हम विश्व को शिक्षा की सस्ती व अच्छी वैकल्पिक व्यवस्था दे सकते हैं। पश्चिम की नकल करके हम पश्चिम से आगे नहीं निकल सकते। ❑

(बाल एवं विज्ञान विषयक लेखक)

सरकारी स्तर पर शिक्षा पर बड़े निवेश एवं बड़ी योजनाएँ घोषित होने के बाद भी ग्रामीण एवं आदिवासी क्षेत्रों में शिक्षा की स्थिति ठीक नहीं है। शहर से दूर ग्रामीण क्षेत्र में शिक्षक नियुक्ति नहीं लेते हैं। शिक्षण के लिये पर्याप्त भवन तथा अन्य सुविधाएँ भी उपलब्ध नहीं होतीं। वहीं पोषाहार, मध्याह्न-भोजन एवं शिक्षकों का तकनीकी शिक्षण जैसे कार्यक्रम शिक्षा के मूल भावों और उसके अभावों पर आवरण डाल देते है। शिक्षा में निजी भागीदारी बढ़ने से, कॉर्पोरेट सेक्टर के लाभ के अनुसार नियम तय किये जाते हैं, जो शहरों में लागू होते हैं। आज भी गाँवों में शिक्षा की पहुँच सुनिश्चित नहीं की जाती है। देश की 65 प्रतिशत आबादी गाँवों में रहती है अतः गाँवों में शिक्षा को उपेक्षित कर, शिक्षा को वैश्विक स्तर पर नहीं लाया जा सकता। शिक्षा के अभाव में गाँवों में उत्पादकता समाप्त होने से आत्मनिर्भरता समाप्त होती जा रही है।

शिक्षा का न हो व्यापारीकरण

❑ डॉ. रेखा भट्ट

वैदिक काल में भारत में प्रचलित गुरुकुल शिक्षा प्रणाली में गुरुओं द्वारा अपने शिष्यों को दो प्रकार की विद्याएँ प्रदान की जाती थी, ये विद्याएँ परा एवं अपरा कहलाती थी। अपरा विद्या के अंतर्गत वेद-वेदांग की सम्पूर्ण शिक्षा, और पराविद्या आत्मज्ञान से संबंधित थी। परा विद्या भौतिकता एवं धन की कामना रखने वाले व्यक्ति को प्रदान नही की जाती थी। कठोपनिषद् के अनुसार यम ने नचिकेता को परा विद्या के योग्य पाकर ही उन्हें यह ज्ञान प्रदान किया। वैदिक काल में ज्ञान प्राप्ति का आधार आर्थिक सम्पन्नता नही था।

छान्दोग्योपनिषद में प्रसंग आता है कि राजा जनश्रुति, रैक्व ऋषि से ज्ञान प्राप्त करने के लिये उन्हें धन का प्रलोभन देते हैं, किन्तु रैक्व ऋषि कहते हैं, ''हे राजन यह गायें, स्वर्ण और रथ तू अपने पास ही रख, मुझे इनकी आवश्यकता नहीं है।'' स्पष्ट है - उस समय शिक्षा का उद्देश्य मनुष्य के जीवन से अज्ञानता को दूर कर स्वयं को आध्यात्मिक रूप से ऊपर उठाने से जुड़ा था। शिक्षा प्राप्ति का आधार अर्थ- सपंन्नता नही था, सामान्य व्यक्ति भी अपनी योग्यता व क्षमता के अनुरूप उच्च शिक्षा प्राप्त कर सकता था। ''अन्न दानं परमदानं, विद्या दानं अतः-परम'' सूक्ति से ज्ञात होता है कि वैदिक काल में गुरुओं द्वारा शिष्यों को शिक्षा, दान के रूप में प्रदान की जाती थी।

मुगल काल में धार्मिक शिक्षा का प्रभाव बढ़ गया था, फिर भी भारतीय समाज में अधिकांश शिक्षा निःशुल्क प्रदान की जाती थी। ब्रिटिश काल में कर्मचारियों की आवश्यकता की पूर्ति के लिये ब्रिटिश सरकार द्वारा शिक्षण संस्थान खोले गये। प्रारम्भ में ये संस्थान मिशनरी अनुदान पर चलाये गये किन्तु धीरे-धीरे इन्हें शुल्क आधारित बना दिया गया। सन् 1890 में पहली बार गोपालकृष्ण गोखले ने अंग्रेजों के सामने प्राथमिक शिक्षा को

नि:शुल्क करने का प्रस्ताव रखा, किन्तु अंग्रेजों ने इसका विरोध किया और ''वुड्स का घोषणा पत्र'' लागू कर दिया। अंग्रेजों ने धीरे-धीरे सम्पूर्ण भारत से भारतीय ज्ञान आधारित शिक्षण पद्धति को नष्ट करते हुए मेकॉले शिक्षा पद्धति का विस्तार किया। औद्योगिक क्रान्ति के साथ शिक्षा में अर्थ की प्रधानता बढ़ गई और शिक्षा का उद्देश्य अर्थोपार्जन तक सीमित रह गया।

स्वतन्त्र भारत में भी आधुनिक शिक्षण में भौतिकता के प्रभाव से शिक्षा पूर्ण रूप से आर्थिक लब्धता पर आधारित हो गई। सन् 1991 से भारत में आर्थिक सुधारों के प्रयासों के नाम पर वैश्वीकरण की प्रक्रिया प्रारम्भ कर दी गयी, इसने देश की अर्थव्यवस्था को प्रभावित किया है। शिक्षा क्षेत्र पर भी इसका प्रभाव पड़ा। परिणामस्वरूप शिक्षा का निजीकरण तथा व्यापारीकरण जैसी चुनौतियाँ उभर कर सामने आईं।

आजादी के बाद शिक्षा के विकास के लिये अनेक आयोग, नीतियाँ एवं अभियान चलाये गये किन्तु वे सफल नहीं हो सके। आज वैश्विक बाजार की माँगों के अनुसार सर्वोच्च शिक्षण संस्थानों में शिक्षा के मानकों को निर्धारित किया जाता है। सभी क्षेत्रों में प्रशिक्षित एवं दक्ष कामगारों एवं माँगों को पूरा करने के लिये आईआईटी, आईआईएम जैसे गुणवत्तापूर्ण सार्वजनिक शिक्षण संस्थानों की संख्या बहुत सीमित है। विकल्प के रूप में निजी शिक्षण संस्थानों की संख्या बढ़ती जा रही है। अपनी सीमित क्षमताओं एवं अधिकतम आर्थिक लाभ पाने की प्रतिबद्धता के कारण निजी संस्थानों द्वारा महँगी शिक्षा उपलब्ध करवाई जाती है। इनमें आर्थिक रूप से सक्षम उच्च श्रेणी का एक छोटा वर्ग ही शिक्षा प्राप्त करने में सक्षम है। मध्यम एवं अल्प आय वर्ग, भारी ऋण लेकर निजी संस्थान में प्रवेश पाते हैं किन्तु जिस स्तर को पाने के लिए शिक्षा प्राप्त करते हैं उसके औसत वेतन की नौकरी भी उन्हें नहीं मिलती है, जबकि निजी संस्थानों द्वारा ऊँचे वेतनमान पाने का प्रचार-प्रसार कर शिक्षा शुल्क कई गुना बढ़ा दिया जाता है। ये निजी संस्थान एवं योग्य शिक्षक उपलब्ध करवाने के प्रति जवाबदेह नहीं होते। पूर्णतः निजी लाभ के लिये कई गैर सरकारी शिक्षण संस्थाओं द्वारा, शिक्षा को सर्वसुलभ एवं व्यापक बनाने के स्थान पर, व्यावसायिक स्वरूप में बदल दिया गया है। अनेक गैर मान्यता प्राप्त कोचिंग संस्थानों में प्रतियोगी परीक्षाएँ उत्तीर्ण कराने के लिये विद्यार्थियों से भारी फीस ली जाती है। इन कोचिंग संस्थाओं ने नियमित शिक्षण संस्थाओं द्वारा प्रदान की जाने वाली शिक्षा के महत्त्व को गौण कर दिया, निजीकरण ने शिक्षा को पूर्ण रूप से उद्योग बना दिया है। महँगी विदेशी डिग्री प्राप्त करना, रोजगार के साथ-साथ सामाजिक प्रतिष्ठा से भी जुड़ गया है। कुछ प्रख्यात संस्थानों के अतिरिक्त विदेशी शिक्षण संस्थानों में, भारत से कई गुना अधिक फीस चुका कर भी अपेक्षित स्तर की शिक्षा प्राप्त नहीं होती।

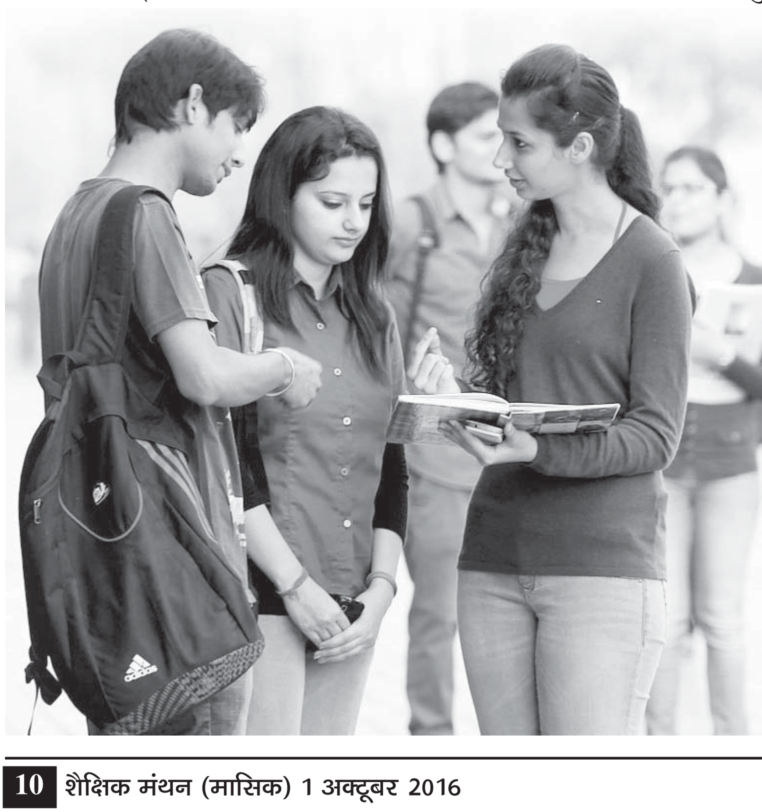

उच्च स्तरीय गुणवत्तायुक्त विदेशी शिक्षण संस्थान, ढाँचागत सुविधाएँ, पाठ्यक्रमों में विविधता एवं श्रेष्ठ योग्यता प्राप्त शिक्षक उपलब्ध करवाने के साथ विद्यार्थी के प्लेसमेंट (नियुक्ति) के लिये सौ प्रतिशत जवाबदेह होते हैं। यह जवाबदेही, उद्योगपतियों, पूँजीपतियों को इन विश्वविद्यालयों में निवेश करने तथा अनुदान देने के लिये विश्वसनीय बनाती है। उच्च शिक्षा में अधिकांश निजी संस्थानों द्वारा शिक्षा की मात्र औपचारिकतापूर्ण की जाती है। निजी विद्यालयों द्वारा प्राथमिक से उच्च

माध्यमिक स्तर तक अंग्रेजी शिक्षण प्रदान करने और गुणवत्तापूर्ण शिक्षा का आश्वासन दिया जाता है। उच्च कोटि का विदेशी शिक्षण, अंग्रेजी भाषा व अंग्रेजी तौर तरीकों से ही प्राप्त हो सकेगा, इस मानसिकता से अभिभावक निजी स्कूलों में बच्चों को महँगी शिक्षा दिलवाने को विवश होते हैं। निजी अंग्रेजी शिक्षण संस्थानों में महँगी शिक्षा द्वारा विदेशी भाषा में विदेशी संस्कृति पर अमल करते हुए भारतीय विद्यार्थी विदेशी साहित्यकारों तथा वैज्ञानिकों पर गर्व करते हैं। समय के साथ इस पीढ़ी से भारतीयता व सांस्कृतिक मूल्य समाप्त हो रहे हैं। स्थानीय सार्वजनिक शिक्षण संस्थानों में आधारभूत सुविधाओं तथा शिक्षण व्यवस्थाओं के अभाव के कारण भी समाज का रुझान इन निजी संस्थानों की ओर बढ़ा है।

सरकारी स्तर पर शिक्षा पर बड़े निवेश एवं बड़ी योजनाएँ घोषित होने के बाद भी ग्रामीण एवं आदिवासी क्षेत्रों में शिक्षा की स्थिति ठीक नहीं है। शहर से दूर ग्रामीण क्षेत्र में शिक्षक नियुक्ति नहीं लेते हैं। शिक्षण के लिये पर्याप्त भवन तथा अन्य सुविधाएँ भी उपलब्ध नहीं होतीं। वहीं पोषाहार, मध्याह्न-भोजन एवं शिक्षकों का तकनीकी शिक्षण जैसे कार्यक्रम शिक्षा के मूल भावों, और उसके अभावों पर आवरण डाल देते हैं।

शिक्षा में निजी भागीदारी बढ़ने से, कॉर्पोरेट सेक्टर के लाभ के अनुसार नियम तय किये जाते हैं, जो शहरों में लागू होते हैं। आज भी गाँवों में शिक्षा की पहुँच सुनिश्चित नहीं की जाती है। देश की 65 प्रतिशत आबादी गाँवों में रहती है अत: गाँवों में शिक्षा को उपेक्षित करके शिक्षा को वैश्विक स्तर पर नहीं लाया जा सकता। शिक्षा के अभाव में गाँवों में उत्पादकता समाप्त होने से आत्मनिर्भरता समाप्त होती जा रही है। ग्रामीण अर्थव्यवस्था के बिगड़ने से देश की आर्थिक स्थिति सुदृढ़ नहीं हो सकती है। सुनियोजित व्यवस्थाओं एवं उचित निवेश द्वारा ग्रामीण शिक्षानीति का क्रियान्वयन हो तथा शिक्षण को कुटीर उद्योगों से जोड़कर आर्थिक विकास की परिस्थितियाँ तैयार की जा सकती है। स्थानीय उद्योगों द्वारा ग्रामीण शिक्षण को जोड़ना लाभकारी होगा। स्थानीय कच्चे उत्पादों के साथ कौशलयुक्त, दक्ष कामगार उपलब्ध हो सकेंगे।

देश में मानव संसाधनों का विस्तार एवं कार्यक्षमता शिक्षा के स्तर पर निर्भर करती है। शिक्षा के उच्च स्तर से तकनीकी निपुणता प्राप्त की जा सकती है, इससे कर्मचारियों व अन्य कार्यशील जनसंख्या की क्षमताओं को बढ़ाया जा सकता है।

अत: शिक्षा में आवश्यकतानुसार किया गया निवेश, उच्च विकास दर प्राप्त करने में सहायक होगा। उच्च शिक्षा के क्षेत्र में निजी विश्वविद्यालयों का स्तर सर्वोच्च सार्वजनिक वित्त पोषित विश्वविद्यालयों के समकक्ष लाने के प्रयासों से स्वस्थ व्यावसायिक प्रतिस्पर्धा उत्पन्न होगी और शिक्षा की गुणवत्ता में सुधार होगा। ऐसे निजी एवं सार्वजनिक विश्वविद्यालयों को विशेष महत्त्व दिया जाए जो राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय मानकों को पूरा करते हों। सम्पूर्ण शिक्षा क्षेत्र में परिवर्तन के सार्थक प्रयासों से ही भारतीय शिक्षा को उच्च स्तरीय एवं गुणवत्तापूर्ण बनाया जा सकता है।

सस्ती व सर्वसुलभ परन्तु गुणवत्तापूर्ण शिक्षा से तैयार भावी पीढ़ी अपने ज्ञान, कौशल और दक्षता से भारत को पुन: आर्थिक भव्यता और सांस्कृतिक गौरव प्रदान करने में सफल होगी। ❑

(व्याख्याता रसायन शास्त्र, राजकीय मीरा कन्या महाविद्यालय, उदयपुर)

व्यापार बनती जा रही है शिक्षा

व्यवसाय बनती इस शिक्षा का क्या होगा। फिलहाल कुछ कहना मुश्किल है। लेकिन इतना तय है कि सरकारी स्कूल अपनी सिकुड़ती भूमिका में हैं जिस देश के सरकारी स्कूलों में 18 करोड़ से अधिक बच्चे शिक्षा पा रहे हो, उस देश में सरकारी स्कूलों में पढ़ाई करने वाले बच्चों को नाकारा करार दे दिया जाता है, ये अत्यन्त दुःखद और चिन्ताजनक स्थिति है। हम मानते हैं कि हमारी सरकार शिक्षा को राज्य स्तर में बाँटने के कारण स्कूली शिक्षा का स्तर बनाए रखने में पिछड़ गई लेकिन केन्द्रीय विद्यालयों की सफलता बताती है कि स्कूली स्तर पर शिक्षा का स्तर बनाए रखा जा सकता है, बशर्ते केन्द्र सरकार इसमें दिलचस्पी ले। केन्द्र को यह सोचना चाहिए कि वह शिक्षा देने के नाम पर आम जनता को क्यों लूटने दे रही है। इसका कोई न कोई इलाज सरकार को ढूँढ़ना पड़ेगा।

❑ **बजरंगी सिंह**

शिक्षा का क्या महत्त्व है शायद इसको बताने की जरुरत नहीं है। हर माँ-बाप अपने बच्चे को अच्छी से अच्छी शिक्षा दिलाना चाहता है। उसका सपना होता है कि उनका बच्चा पढ़ लिख कर महान बने और दुनियाँ में खूब नाम कमाएँ। इन स्वप्नों को पूरा करने में स्कूल-कॉलेज और शिक्षा व्यवस्था बहुत बड़ी भूमिका निभाते हैं। लेकिन विड़म्बना है कि बच्चों का भविष्य और जीवन गढ़ने वाली शिक्षा आजकल पढ़ाई का केन्द्र न रह कर कमाई की जरिया बनती जा रही है। स्कूल-कॉलेज आजकल ऐसे वातावरण से घिरते जा रहे हैं, जिससे निकल पाना एक बड़ी चुनौती बन गयी है, जिसके चलते स्कूल व कॉलेजों का व्यावसायिक केंद्र के रूप में बदलने से रोकना है। वर्तमान की व्यावसायिकता ने अच्छी शिक्षा को सिर्फ धन्नासेठों की बपौती बना कर रख दिया है। अधिक शुल्क के कारण साधारण एवं मध्यवर्गीय परिवार अपने बच्चे को बड़े नामी गिरामी स्कूलों में प्रवेश नहीं दिला सकते, उल्टे उनमें निराशा बढ़ रही है और उनके बच्चे कुण्ठाग्रस्त हो रहे हैं।

आजादी के पहले स्थापित हुए कुछ स्कूलों का आज भी बड़ा नाम है। ये स्कूल अपनी उच्च स्तर की शिक्षा के लिए देश में ही नहीं विश्व में अपना नाम बनाए हुए हैं। इन स्कूलों की सूची में आजादी के बाद भी कुछ नए स्कूल जुड़े हैं। ये सभी कहने के लिए पब्लिक स्कूल हैं किन्तु इसमें आम आदमी के बच्चे प्रवेश नहीं पाते क्योंकि इन स्कूलों में प्रति वर्ष शुल्क के रूप में प्रति छात्र एक लाख से दो लाख रुपये लिए जाते हैं। दिल्ली जैसे बड़े शहरों में तो छोटी कक्षाओं में भी प्रवेश दिलाना टेढ़ी खीर है। क्या ये स्कूल बच्चों को ऐसा कुछ दे रहे हैं, जिससे उन्हें लाखों रुपये दे दें।

यहाँ सवाल यह है कि यदि ऐसी ही स्थिति आगे भी बनी रही तो व्यवसाय बनती इस शिक्षा का क्या होगा। फिलहाल कुछ कहना मुश्किल है। लेकिन इतना तय है कि सरकारी स्कूल अपनी सिकुड़ती भूमिका में हैं जिस देश के सरकारी स्कूलों में 18 करोड़ से अधिक बच्चे शिक्षा पा रहे हो, उस देश में सरकारी स्कूलों में पढ़ाई करने वाले बच्चों को नाकारा करार दे दिया जाता है, ये अत्यन्त दु:खद और चिन्ताजनक स्थिति है। हम मानते हैं कि हमारी सरकार शिक्षा को राज्य स्तर में बाँटने के कारण स्कूली शिक्षा का स्तर बनाए रखने में पिछड़ गई लेकिन केन्द्रीय विद्यालयों की सफलता बताती है कि स्कूली स्तर पर शिक्षा का स्तर बनाए रखा जा सकता है, बशर्ते केन्द्र सरकार इसमें

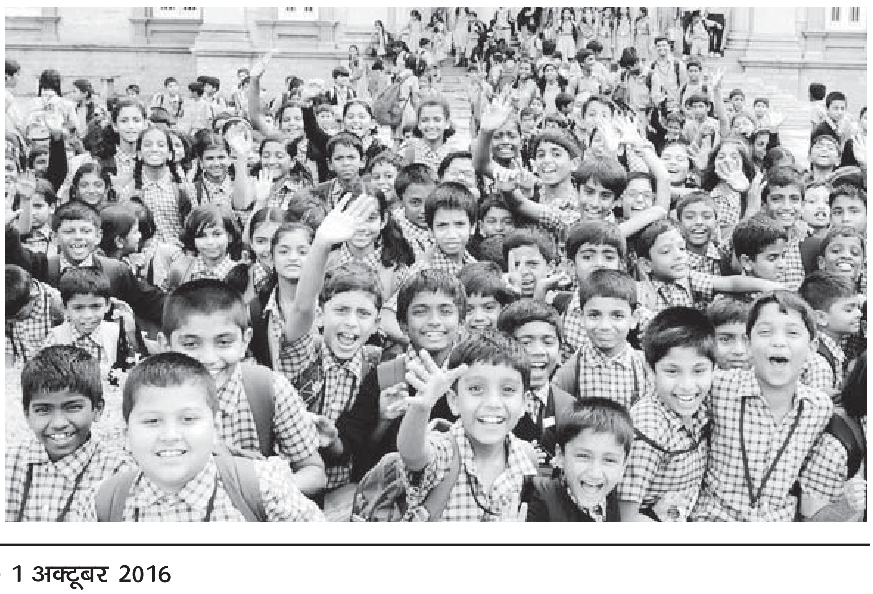

दिलचस्पी ले। केन्द्र को यह सोचना चाहिए कि वह शिक्षा देने के नाम पर आम जनता को क्यों लूटने दे रही है। इसका कोई न कोई इलाज सरकार को ढूँढ़ना पड़ेगा।

किसी भी देश की प्रगति और सम्पन्नता उस देश की जनसंख्या के साक्षरता अनुपात पर निर्भर करती है। बिना शिक्षा के किसी देश, राज्य या परिवार की प्रगति सम्भव नहीं है क्योंकि शिक्षा ही सभ्यता और संस्कृति के निर्माण में सहायक होती है और मानव को अन्य प्राणियों से श्रेष्ठ बनाती है। शिक्षा के प्रति केन्द्र और राज्य सरकारों ने ढुलमुल नीति अपनाई है। उसी का परिणाम है कि आजकल शहरों में तो क्या, गाँवों में भी शिक्षा का व्यावसायीकरण हो गया है। यदि आँकड़ों को देखा जाए तो सरकारी स्कूल में केवल निर्धन वर्ग के बच्चे ही पढ़ने के लिए जाते हैं। इसके लिए सरकार मिड-डे-मील से लेकर मुफ्त पुस्तकें, ड्रेस न जाने क्या-क्या दे रही है, फिर भी इन स्कूलों में छात्रों की संख्या को लेकर रोना बना रहता है। आखिर क्यों? इस सवाल का जवाब हमें अन्ततोगत्वा ढूँढ़ना पड़ेगा। निजी शिक्षण संस्थाओं में शुल्क इतना अधिक है कि गरीब और सामान्य परिवार के बच्चे इन स्कूलों की ओर देख भी नहीं सकते।

आज से 20 वर्ष पहले निजी स्कूलों की संख्या आज के मुकाबले न के बराबर थी। लेकिन आज स्थिति बिल्कुल इसके विपरीत है। आज निजी शिक्षण संस्थाएँ चारों ओर कुकुरमुत्तों की तरह फैली हुई हैं आज अच्छी और उच्च शिक्षा का व्यावसायीकरण हो चुका है। इसके कारण गाँवों का पिछड़ापन बढ़ता जा रहा है। गाँवों के बच्चे केवल दस प्रतिशत ही आई.ए.एस., आई.पी.एस. तथा उच्च श्रेणी की परीक्षाओं में सफल हो पा रहे हैं। भारत सरकार को इसकी जिम्मेदारी लेनी पड़ेगी और शिक्षा व्यवस्था को ही व्यापक, सुदृढ़ और सक्षम बनाना होगा। पिछले दो दशकों में सरकारें ठीक उल्टी दिशा में चलती दिखाई देती है। वह खुद शिक्षा के निजीकरण को बढ़ावा दे रही है।

पिछले कुछ वर्षों में स्कूलों की संख्या में वृद्धि हुई है। स्कूलों में अच्छी पढ़ाई न हो पाने के कारण बहुत से बच्चे बीच में ही स्कूल छोड़ देते हैं। सरकारी स्कूलों की स्थिति बिगड़ने का एक और कारण यह रहा कि कई तरह के निजी स्कूल खुलते गए। बड़े लोगों, पैसे वालों और प्रभावशाली परिवारों के बच्चे उनमें जाने लगे सरकारी स्कूल में सिर्फ गरीब बच्चे रह गए यह एक तरह का दुष्चक्र है, जिसमें सरकारी शिक्षा व्यवस्था गहरे में फँसती जा रही है। देश में समान स्कूल प्रणाली लाए बगैर इस दुष्चक्र को नहीं तोड़ा जा सकता। शिक्षा में समानता और सर्वव्यापीकरण का गहरा सम्बध है। अफसोस की बात है कि संसद द्वारा शिक्षाधिकार कानून बनाने के बावजूद इस दुष्चक्र को हम नहीं तोड़ सके। क्योंकि इस कानून में सरकारी शिक्षा की दुर्गति को तथा निजीकरण एवं बाजारीकरण को रोकने के पर्याप्त उपाए मौजूद नहीं हैं। यदि लक्ष्य देश के सारे बच्चों को शिक्षित करने का है तो यह विधेयक अपर्याप्त व भ्रामक है। यही नहीं, यह भारत में शिक्षा में बढ़ते हुए भेदभाव, गैर बराबरी और शिक्षा के बाजारीकरण व मुनाफाखोरी पर वैधानिकता का ठप्पा लगाने का काम करता है। जबकि जरूरत उन पर तत्काल रोक लगाने की है। शिक्षा का बढ़ता हुआ बाजार वास्तव में बहुसंख्यक बच्चों को अच्छी शिक्षा से वंचित करने का काम करता है। दरअसल बाजार और अधिकार दोनों एक साथ नहीं चल सकते। यह चिन्ता की बात है कि शिक्षा के बाजारीकरण व व्यावसायीकरण पर रोक नहीं लगाने वाले विधेयक को कैसे शिक्षा अधिकार विधेयक का नाम दिया गया है। बुनियादी बदलाव करने के बजाय कानूनों का झुनझुना आम आदमी को पकड़ा दिया गया है। इस विधेयक से देश के साधारण बच्चों को उम्दा, साधन सम्पन्न, सम्पूर्ण शिक्षा मिलने की कोई उम्मीद नहीं बनती, परिणामतः शिक्षा में भेदभाव की जड़े और मजबूत हुई है।

शिक्षा का व्यावसायीकरण हो यह बात भारत के सनातन सांस्कृतिक मूल्यों के विपरीत है। शिक्षा तो दान देने से बढ़ती है, पर आज शिक्षा खुलेआम बेची जा रही है। जब सारी गंगा उल्टी बह रही है, तो शिक्षा में व्यावसायीकरण कैसे रुक पाएगा।

चरित्र ही प्रारब्ध है। चरित्र से ही किसी राष्ट्र के प्रारब्ध का निर्माण होता है। हीन चरित्र के व्यक्तियों से कोई राष्ट्र महान नहीं बनता। यदि हम राष्ट्र को महान बनाना चाहते हैं, तो हमें चरित्रवान युवकों और युवतियों का निर्माण करना पड़ेगा। यह कार्य अच्छी शिक्षा द्वारा ही सम्भव है।

औपनिवेशिक भारत की शिक्षानीति और आजाद भारत में उसके किंचित सुधरे रूप ने शिक्षा को नौकरी तक सीमित कर दिया है। शिक्षण व्यवस्था द्वारा उत्पादित विद्यार्थी कुशल मजदूर, पर्यवेक्षक या अर्थ व्यवस्था के तीसरे क्षेत्र अर्थात् सेवा क्षेत्र के लिए तैयार माल की तरह शैक्षणिक संस्थाओं से निकलते हैं। उक्त क्षेत्र यदि इस तैयार माल का उपयोग नहीं कर पाते तो रोजगार या जीविकोपार्जन के लिए वे जो भी रास्ता चुनते हैं, उसमें अर्जित शिक्षा की भूमिका नगण्य होती है। यदि व्यापक तौर पर एक सर्वेक्षण किया जाए कि नौकरी न मिलने के बाद युवाओं द्वारा चुनी गई आजीविका में उनकी शिक्षा कितनी मददगार हुई या नहीं तो इसके नतीजे भयंकर रूप से निराशाजनक होंगे। इस तरह हम देखते हैं कि भारत में युवाओं की संख्या और नौकरी की उपलब्धता को देखते हुए शिक्षा न तो रोजगार के प्रति कोई विश्वास पैदा कर पायी और न ही वह नैतिक, सामाजिक मूल्यों के विकास की दिशा में कोई सकारात्मक पहल ही कर पायी है। ❑

(स्वतंत्र लेखक, स्तम्भकार)

महँगी होती शिक्षा के लिए एक कारक जिम्मेदार नहीं है। आवश्यकता है कि हम अपनी सोच में परिवर्तन करें, आज माता-पिता महँगे स्कूलों में पढ़ाना, कोचिंग पर भेजना, अंग्रेजी माध्यम की शिक्षण संस्थाओं में बच्चों को प्रवेश कराना ''स्टेटस-सिम्बल'' बन गया है। देश में अनेक उदाहरण हैं जहाँ शासकीय शिक्षण संस्थाओं में पढ़ने वाले बालकों ने विभिन्न क्षेत्रों में उत्कृष्टता प्राप्त की है। भारी-भरकम फीस देकर, भारतीय परिधान का त्याग कर पश्चिम के परिधान का आकर्षण हमारी आंतरिक प्रदूषण की प्रवृत्ति को इंगित करता है। अतः आवश्यकता इस बात की है कि शासकीय शिक्षण संस्थाओं में बालकों को अध्ययन हेतु भेजें, स्वयं उसका ध्यान करें।

आंतरिक प्रदूषण से शिक्षा में महँगाई

❑ **प्रो. मधुर मोहन रंगा**

हमारे राष्ट्रीय जीवन में मूल्यों का महत्व है, राष्ट्रीय स्पन्दन के अनवरत प्रवाह में नैसर्गिक गुणों के साथ-साथ समर्पण, संकल्प, प्रतिबद्धता, की भी आवश्यकता है परंतु परिवर्तित होते वैश्विक परिदृश्य की भौतिकतावादी सोच अग्रसर होकर मानवीय जीवन के प्रत्येक पहलू पर प्रभाव डाल रही है। व्यक्ति, समाज, राष्ट्र व विश्व के सार्वभौमिक-विकास की ओर अग्रसर होने वाले पथ में भी भौतिकतावादी दृष्टिकोण रुकावटें डाल रहा है। भारतीय जीवनदृष्टि में विश्वकल्याण की बातों को आत्मसात कर जीव-जगत- जगदीश का समन्वय ही संतुलित विकास का आधार है, जिस प्रकार मानवीय मूल्यों के पतन का प्रभाव व्यक्ति, समाज व राष्ट्र के जीवन पर पड़ा है, उनसे मानव का आंतरिक पर्यावरण भी दूषित हुआ है। इसी कारण लोभ, लालच, तृष्णा व संसाधनों के अत्यधिक दोहन की प्रवृत्ति विकसित होने लगी है, उससे शिक्षा क्षेत्र भी प्रभावित होने लगा है, शिक्षा प्रदाता, शिक्षक प्रबन्धन व व्यवस्था आदि पर भी पाश्चात्य प्रवृत्ति का प्रभाव दृष्टिगोचर होता है। शिक्षा जैसा पुनीत कार्य भी व्यवसाय का रूप ले रहा है, जहाँ सरस्वती की पूजा होनी चाहिए वहाँ लक्ष्मी की आराधना होने लगी है। इसी कारण शिक्षा जगत् प्रभावित होने लगा है। यदि हम समाज के मनोविज्ञान को समझे तो इस विषय की गंभीरता का संज्ञान लेकर, समाज में घटित होने वाले सामान्य वार्तालाप, हमें दिशा प्रदान कर सकते हैं। 6 वर्ष का बालक माँ से कहता है – मम्मा, मैं आपसे बहुत प्यार करता हूँ। माँ जवाब देती है, बेटा मैं भी तुमसे बहुत प्यार करती हूँ। 15 वर्ष का हाने पर बालक पुनः कहता है – मम्मा, मैं आपसे बहुत प्यार करता हूँ मम्मा, कहती है कितने पैसे चाहिये? 25 वर्षीय युवा फिर कहता है- मम्मा, मैं आपसे बहुत प्यार करता हूँ। माँ कहती है- कहाँ रहती है? क्या करती है? पुत्र-नौकरी करती है, आज के इस युग में पैसा जरूरी है, मम्मा। 45 वर्षीय पुत्र, पुनः माँ से कहता है- आप से स्नेह करता हूँ, माँ-कहा था ना कि उससे शादी मत करना। 55 वर्षीय पुत्र पुनः कहता है – मम्मा, मैं आपसे बहुत प्यार करता हूँ। मम्मा- मैं किसी भी जायदाद के पेपर पर हस्ताक्षर नहीं करूँगी। तात्पर्य समाज में लक्ष्मी की

पूजा के कारण सामाजिक संबंधों पर प्रहार हो रहा है, यही सोच हमारी शिक्षा व्यवस्था को प्रभावित कर रहा है। शिक्षा प्रदाता भी अधिक से अधिक अर्थ अर्जन करना चाहता है। भारी भरकम फीस देकर उपाधि तो प्राप्त की जा सकती है परंतु संस्कारों से दीक्षित नहीं किया जा सकता है। स्वाधीनता के बाद विज्ञान व तकनीकी का विकास अधिक हुआ है, परंतु शिक्षा प्रणाली महँगी हो रही है।

आज का मध्यमवर्गीय परिवार रोजगारपरक शिक्षा प्राप्त करना चाहता है। जब स्नातक व स्नातकोत्तर उपाधि प्राप्त विद्यार्थी को रोजगार नहीं मिलता, ऐसी स्थिति में असामाजिक गतिविधियों को गति मिलती है। यह मनोवैज्ञानिक व सामाजिक विकृति को जन्म देती है। वैश्वीकरण, उदारीकरण के कारण उच्च शिक्षा के प्रति उत्सुकुता मध्यमवर्गीय परिवारों में बढ़ी, आर्थिक सामर्थ्य न होने के बाद भी अभिभावक व्यक्तिगत ऋण, बैंक ऋण लेकर बच्चों को उच्च शिक्षा प्रदान करा रहे हैं। निजी शिक्षण संस्थाओं की भारी भरकम फीस के अतिरिक्त डोनेशन की मार भी अभिभावकों पर पड़ रही है। आज अभिभावकों में अपने बच्चों को विदेश से शिक्षा प्राप्त कराने की होड़ मची हुई है। इसे वे प्रतिष्ठा का विषय बनाते हैं, 81 प्रतिशत भारतीय विदेश से प्रबन्धन की उपाधि प्राप्त करना चाहते हैं। एक समाचार पत्र के अनुसार 13 केन्द्रीय मंत्रीयों के बच्चों की प्रोफाइल से ज्ञात हुआ कि 9 मंत्रियों के बच्चे विदेशों में अध्ययन कर रहे हैं। विदेशों में पढ़ाई करने के लिए 10 प्रमुख देशों को वरीयता प्रदान की जाती है जिसमें अमेरिका, कनाडा, आस्ट्रेलिया शामिल हैं। उद्योग चैम्बर की रिपोर्ट के अनुसार 4 लाख से अधिक विद्यार्थी विदेशों में पढ़ाई कर लाखों रुपये खर्च कर रहे हैं। ऐसोचैम का सर्वेक्षण बताता है कि अधिकतर माता-पिता अपनी आमदनी का 65 प्रतिशत बच्चों की पढ़ाई पर खर्च कर देते हैं, तात्पर्य यह है कि अभिभावक बच्चों की पढ़ाई पर ध्यान देते हैं यह अच्छी बात है परंतु शिक्षा सस्ती व गुणवत्तापूर्ण होनी चाहिये। शिक्षा के व्यावसायीकरण व निजीकरण के कारण शिक्षा महँगी होती जा रही है। सरकारी शिक्षण संस्थाओं के प्रति रुझान कम होता जा रहा है जबकि वहाँ फीस कम है निजी शिक्षण संस्थाओं में यूनीफॉर्म, प्रवेश शुल्क, मेडिकल चार्ज, प्रयोगशाला, पुस्तकालय, हॉस्टल, कॉशन-मनी, वार्षिक चार्ज न जाने कितने विभिन्न प्रकार के मदों के अन्तर्गत शुल्क वसूल करते हैं। तेजी से निजी शिक्षण संस्थाओं के विभिन्न मदों में वृद्धि हो रही है। सरकारी शिक्षण संस्थाओं में आधारभूत सुविधाओं के साथ-साथ शिक्षकों की कमी, आधुनिक स्मार्ट रूम, वाचनालय, आभासी प्रयोगशालायें, इन्टरनेट, कम्प्यूटर आधारित शिक्षा आदि की कमी के कारण निजी शिक्षण संस्थाओं की ओर अग्रसर होना स्वभाव बन गया है। उद्योग परिसंघ, एसोचैम कि रिपोर्ट के अनुसार पिछले करीब एक दशक में स्कूली बच्चों की पढ़ाई पर होने वाले

खर्चे में 168 प्रतिशत की वृद्धि हुई है। इस कारण मध्यमवर्गीय परिवार का बजट बिगड़ गया है। अभिभावक अन्य खर्चों में कटौती तो कर सकते हैं परंतु बच्चों के भविष्य से जुड़े शिक्षण शुल्क खर्चों में कैसे कटौती कर सकते हैं? इस दौरान कुछ निजी शिक्षण संस्थाओं में ट्यूशन फीस में अत्यधिक वृद्धि हुई है, महँगी यूनीफार्म व जूतों के अतिरिक्त विभिन्न प्रकार के आयोजनों के नाम पर भी अतिरिक्त फीस लेना भी कुछ निजी संस्थाओं की प्रवृति बन गई है।

एसोचैम की रिपोर्ट के अनुसार वर्ष 2000 में बच्चों की यूनीफॉर्म पर सलाना 2500/- रुपये खर्च से बढ़कर वर्ष 2011-2012 में यह 4,000 रुपये से 10,000 रुपये हो गया है। इसके पीछे कहीं व्यावसायिक सोच-जिम्मेदार नहीं है? जहाँ हर प्रकार से लाभ व मुनाफे को वरीयता दी जाती है। आँकड़ों के अनुसार भारत को शिक्षा के लिये मिलने वाली अन्तर्राष्ट्रीय सहायता में एक वर्ष में करीब 100 प्रतिशत वृद्धि हुई है। भारत में शिक्षा के लिए मिलने वाले विदेशी स्रोतों से 806 मिलियन डॉलर सहायता प्राप्त होती है। यह बात यूनाइटेड नेशन द्वारा जारी ग्लोबल ट्रेड डेटा में सामने आई है। यूनेस्को द्वारा वैश्विक शिक्षण सहायता को नियंत्रित करने वाली रिपोर्ट में बताया गया कि 2013 में भारत को शिक्षा के लिए अंतर्राष्ट्रीय स्रोतों से 421 मिलियन डॉलर (करीब 2804 करोड़ रुपये) की आर्थिक सहायता मिली थी जबकि वर्ष 2014 में यह बढ़कर 806 मिलियन डॉलर (करीब 5370 करोड़ रुपये) हो गई। इस रिपोर्ट को तैयार करने वाली टीम के सदस्य केट रेडमेन के अनुसार वर्ष 2013 से वर्ष 2014 के बीच भारत को शिक्षा के लिए मिलने वाली आर्थिक सहायता में बढ़ोत्तरी हुई है, जबकि अन्य देशों में इसकी कमी आई है। भारत को शिक्षा के लिए आर्थिक सहायता देने वाली संस्थाओं में वर्ल्ड बैंक, यूरोपीय संस्थायें, यूनाइटेड किंगडम व जर्मनी है। उपरोक्त आँकड़े शिक्षा क्षेत्र में प्राप्त आर्थिक सहायता को दर्शाते हैं। एक रिपोर्ट के अनुसार केन्द्र ने वर्ष 2015-16 शैक्षणिक सत्र के दौरान 40 सेन्ट्रल विश्वविद्यालयों पर 5621 करोड़ और 22 आई. आई .टी. पर 4135 करोड़ रुपये खर्च किए इसके अलावा मानव संसाधन विकास मंत्रालय ने 31 एन. आई. टी. और इंडियन इंस्टीट्यूट ऑफ इंजीनियरिंग साइंस एंड टेक्नोलॉजी शिवपुर पर 422577 करोड़ रुपये खर्च किये, इंडियन इंस्टीट्यूट ऑफ साइंस, बेंगलुरु पर 120 करोड़ जबकि 19 आई. आई. एम. पर 463 करोड़ व 6 इंडियन इंस्टीट्यूट ऑफ साइंस एजुकेशन एडं रिसर्च पर 550 करोड़ रुपये व्यय किये। आश्चर्य की बात है कि पिछले साल 159 राज्य विश्वविद्यालयों पर 609 करोड़ रुपये व्यय किये गये जबकि देश के सबसे अधिक विद्यार्थी राज्य विश्वविद्यालयों में पढ़ते हैं। ये विश्वविद्यालय ही सबसे ज्यादा डिग्री प्रदान करते हैं। शिक्षा के महँगी होने व निजी शिक्षण संस्थाओं की अनियंत्रित वृद्धि का कारण वित्तीय सहायता का असमान वितरण तो नहीं है। अत: वित्त वितरण विद्यार्थियों की संख्या के आधार पर होना चाहिये। कहीं उच्च शिक्षा के लिए प्रस्तावित राशि का आधा ही अब तक वास्तव में आवंटित किया गया। संसद की स्थायी समिति ने अपनी रिपोर्ट में बताया कि पिछले कुछ समय से प्रस्तावित और आवंटित राशि का अंतर लगातार बढ़ रहा है। उपरोक्त परिदृश्य से यह तो स्पष्ट है कि महँगी होती शिक्षा के लिए एक कारक जिम्मेदार नहीं है। आवश्यकता है कि हम अपनी सोच में परिवर्तन करें, आज माता-पिता महँगे स्कूलों में पढ़ाना, कोचिंग पर भेजना, अंग्रेजी माध्यम की शिक्षण संस्थाओं में बच्चों को प्रवेश कराना ''स्टेटस-सिम्बल'' बन गया है। देश में अनेक उदाहरण हैं जहाँ शासकीय शिक्षण संस्थाओं में पढ़ने वाले बालकों ने विभिन्न क्षेत्रों में उत्कृष्टता प्राप्त की है। भारी-भरकम फीस देकर, भारतीय परिधान का त्याग कर पश्चिम के परिधान का आकर्षण हमारी आंतरिक प्रदूषण की प्रवृत्ति को इंगित करता है। अत: आवश्यकता इस बात की है कि शासकीय शिक्षण संस्थाओं में बालकों को अध्ययन हेतु भेजें, स्वयं उसका ध्यान करें। अत्यधिक चकाचौंध व आधुनिकतम सुविधाओं के नाम पर चल रहे शिक्षण संस्थाओं की महँगी शिक्षा देकर हम अपने भारत के भविष्य को अपसंस्कृति की ओर तो अग्रसर नहीं कर रहे हैं? अत: देशानुकूल सोच के आधार पर सभी अभिभावक शासकीय संस्थाओं में अपने बच्चों को पढ़ाने का दृढ़ संकल्प लें। उत्तर प्रदेश उच्च न्यायालय इलाहाबाद ने भी इस बारे में टिप्पणी की है कि सभी सरकारी अधिकारियों के बालक को राजकीय शिक्षण संस्थाओं में अध्ययन कराया जाय, इससे स्वत: ही राजकीय शिक्षण संस्थाएँ अपने कार्यों का निष्पादन सही प्रकार से करेंगे। अत: महँगी होती शिक्षा के लिए हमारी सोच जिम्मेदार है। शासन की व्यवस्थाओं पर भरोसा कर संस्थाओं के विकास में हमारी भूमिका रहे, तभी शिक्षा के उद्देश्यों को प्राप्त किया जा सकेगा। ❑

विभागाध्यक्ष, पर्यावरण विज्ञान विभाग, सरगुजा विश्वविद्यालय, अम्बिकापुर (छत्तीसगढ़)

ज्ञान का क्षेत्र अर्थार्जन सामर्थ्य प्राप्त करने का साधन बन गया है। अर्थ के दायरे में लाने के पीछे पश्चिमी चिन्तन का जड़वाद और व्यवहार में साम्राज्यवादी सोच है। ब्रिटिश शिक्षा तंत्र हमें विरासत में मिला है जिसे हमने स्वतंत्रता पश्चात भी प्रतिष्ठा का स्थान दिया है। इसके अनुसार अर्थार्जन ही जीवन में सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण करणीय कार्य बन गया है। यह युग तीव्र प्रतिस्पर्धा का है ऐसे में अभिभावक अपनी संतान को ऊँचा पद, अच्छी शिक्षा, उज्ज्वल भविष्य का लक्ष्य लेकर चलता है। इसलिए वह निजी शिक्षण संस्था की ओर आकर्षित होता है।

निवेश से महँगी होती शिक्षा

❑ बजरंग प्रसाद मजेजी

शिक्षा एक ऐसा प्रकाश पुञ्ज है जो व्यक्ति को इच्छाशक्ति, मेहनत, लगन और बौद्धिक प्यास से सम्पन्न बनाता है। एक बौद्धिक उर्जा देता है। शिक्षा गुणार्जन, ज्ञानार्जन, कौशल अर्जन के लिए होती है। अर्थाजन उसका बहुत छोटा और निम्न स्तर का हिस्सा होता है परन्तु शिक्षा का बाजारीकरण करने पर शिक्षा विषयक दृष्टि, संकल्पना और व्यवस्था बदलने से जीवन की गुणवत्ता ही बदल जाती है और व्यवस्था- अव्यवस्था में बदल जाती है। इसलिए हमें शिक्षा की प्रतिष्ठा अर्थ के सन्दर्भ में नहीं अपितु धर्म के सन्दर्भ (शिक्षा के ध्येय एवं लक्ष्य को प्राप्त करने) में करनी होगी। वर्तमान में औपचारिक शिक्षा प्रमुख रूप से सरकारी विद्यालय, निजी विद्यालयों में दी जा रही है। ऐसी दोहरी शिक्षा प्रणाली से अमीर-गरीब वर्ग भेद बढ़ रहा है। साधन सम्पन्न ऐश्वर्यशाली लोगों के लिए पब्लिक स्कूल और गरीब लोगों के लिए सरकारी स्कूल तय माने जाने लगे हैं।

सरकारी विद्यालयों की स्थिति

सामान्यत: सरकारी विद्यालय के शिक्षक निजी विद्यालयों के शिक्षकों से अधिक योग्यताधारी होते हैं। उन्हें वेतन भी वेतन आयोग की अभिशंषा के अनुसार मिलता है। सेवा शर्तों एवं अन्य लाभ, मंहगाई भत्ते आदि भी मिलते है। परन्तु कतिपय शिक्षक अपने कर्त्तव्य का निर्वहन ठीक प्रकार से नहीं करते जिसके कारण अभिभावक की मानसिकता बालक को पब्लिक स्कूल में प्रवेश कराने की हो जाती है। गैर सरकारी विद्यालय के शिक्षक वेतन असमानता के कारण कुण्ठाग्रस्त रहते हैं। इसी प्रकार स्थायी, संविदाकर्मी, विद्यार्थी मित्र, प्रबोधक के एक ही स्कूल में समान शिक्षण कार्य करने के उपरान्त भी वेतन में भारी अन्तर होता है। छात्र-विद्यार्थी अनुपात

भी सरकारी विद्यालय में एक समस्या है 60-70 विद्यार्थियों की संख्या के कारण अध्यापक प्रत्येक विद्यार्थी पर ध्यान नहीं दे पाता है। स्वीकृत पदों की पूर्ती न होने पर, न्यून संख्या में शिक्षक गैर शैक्षिक कार्य का सम्पादन करते हुए शिक्षण कार्य सुचारू रूप से नहीं कर पाता है। इससे विद्यार्थी एवं अभिभावक असन्तुष्ट रहते हैं। शिक्षा अधिकारी, संस्था प्रधान, शिक्षक स्वयं को कर्मचारी मानकर कार्य करते हैं, उनकी निष्ठा कम होती जा रही है, इस कारण वे विद्यालय प्रगति की ओर कम ध्यान देते हैं। परीक्षा परिणाम की दृष्टि से भी बोर्ड की मेरिट में सरकारी विद्यालय पिछड़ रहे हैं, इससे भी प्रतिष्ठा कम हो रही है। सरकारी विद्यालयों में आवश्यक सुविधाओं का अभाव, अध्यापकों की कमी, शिक्षकों का कर्त्तव्य पालन न करने के कारण छात्रसंख्या में कमी हो रही है। समाज के उच्च लोग, शासक, उच्चाधिकारी यह मानकर चलते हैं कि सरकारी स्कूलों में शिक्षण का स्तर उचित नहीं है। वे अपने बालकों को पब्लिक स्कूल में भेजना पसन्द करते हैं। करोड़ों रुपये व्यय करने के बाद भी सरकारी विद्यालय के प्रति ऐसी मानसिकता बन रही है, यह चिन्ताजनक है।

पब्लिक स्कूलों के प्रति दृष्टिकोण एवं स्थिति

ज्ञान का क्षेत्र अर्थार्जन सामर्थ्य प्राप्त करने का साधन बन गया है। अर्थ के दायरे में लाने के पीछे पश्चिमी चिन्तन का जड़वाद और व्यवहार में साम्राज्यवादी सोच है। ब्रिटिश शिक्षा तंत्र हमें विरासत में मिला है जिसे हमने स्वतंत्रता पश्चात भी प्रतिष्ठा का स्थान दिया है। इसके अनुसार अर्थार्जन ही जीवन में सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण करणीय कार्य बन गया है। यह युग तीव्र प्रतिस्पर्धा का है ऐसे में अभिभावक अपनी संतान को ऊँचा पद, अच्छी शिक्षा, उज्ज्वल भविष्य का लक्ष्य लेकर चलता है। इसलिए वह निजी शिक्षण संस्था की ओर आकर्षित होता है। गली-गली, कस्बों, शहरों में चल रहे अत्याधुनिक सुसज्जित भवन, ए.सी. कक्षाकक्ष, अच्छा फर्नीचर, तकनीक शैक्षिक उपकरण, कम्प्यूटर, पुस्तकालय, वाचनालय विभिन्न कार्यक्रमों के विज्ञापन, विद्यालय से मेरिट में आने वाले बालकों के आकर्षक रंगीन फोटो सहित होर्डिंग से प्रभावित होकर अभिभावक अपने बालक को वहाँ प्रवेश दिलाने में शान समझते हैं। शिक्षा के प्रति आ रहे इस रुझान के कारण आज गरीब आदमी भी अपने बच्चों को पब्लिक स्कूल में पढ़ाना चाहते हैं। निजी विद्यालयों की आड़ में चलने वाली ऐसी व्यावसायिक महँगी संस्थाओं की बाढ़ आ गई है। प्रत्येक माता-पिता की इच्छा होती है कि वह अंग्रेजी विद्यालय में पढ़ाकर बच्चों को अफसर बनायेंगे। अपनी गाढ़ी कमाई का धन ऐसी महँगी संस्थाओं को दे रहे हैं।

महंगी शिक्षा का प्रभाव

उच्च शिक्षा की सरकारी महाविद्यालयों की स्थिति भी इसी प्रकार की होने से अभिभावक बड़े-बड़े नामचीन कोचिंग संस्थाओं में बालक को अध्ययन कराने के लिए मजबूर हैं। प्रतियोगी परीक्षाओं के शुल्क, कोचिंग विद्यालयों की भारी भरकम फीस, इंजिनियरिंग, मेडिकल, चार्टेड एकाउन्टस जैसे संकायों की फीस लाखों में होती है। परिणामस्वरूप सामान्य गरीब व्यक्ति अपने बालक को ऐसे संस्थानों में प्रवेश ही नहीं दिला पाता है। इस कारण गरीब बालक को उच्च शिक्षा का अवसर नहीं मिल पाता है जबकि देखा यह जा रहा है कि उद्योगपति, चिकित्सक, इंजिनियर, सी.ए. राजनेताओं के बालक उच्च शिक्षा का व्यय देने की सामर्थ्य रखने के कारण सफलता प्राप्त कर रहे हैं। गरीब की हसरत पूरी नहीं हो रही है। महँगी शिक्षा के कारण वर्गभेद बना रहने वाला है। आवश्यकता है कि अब राष्ट्रपति का बालक और साधारण व्यक्ति का बालक एक ही विद्यालय में साथ-साथ पढ़ें।' ❑

(स्वतन्त्र लेखक)

When Saraswati becomes Lakshmi

❑ Dr. TS Girishkumar

For the Hindus, gods and goddesses are deities; very meticulously programmed deities, with explicit and well thought out purposes. As usual, the immense wisdom behind these is not only amazing, but also inconceivable for people like us.

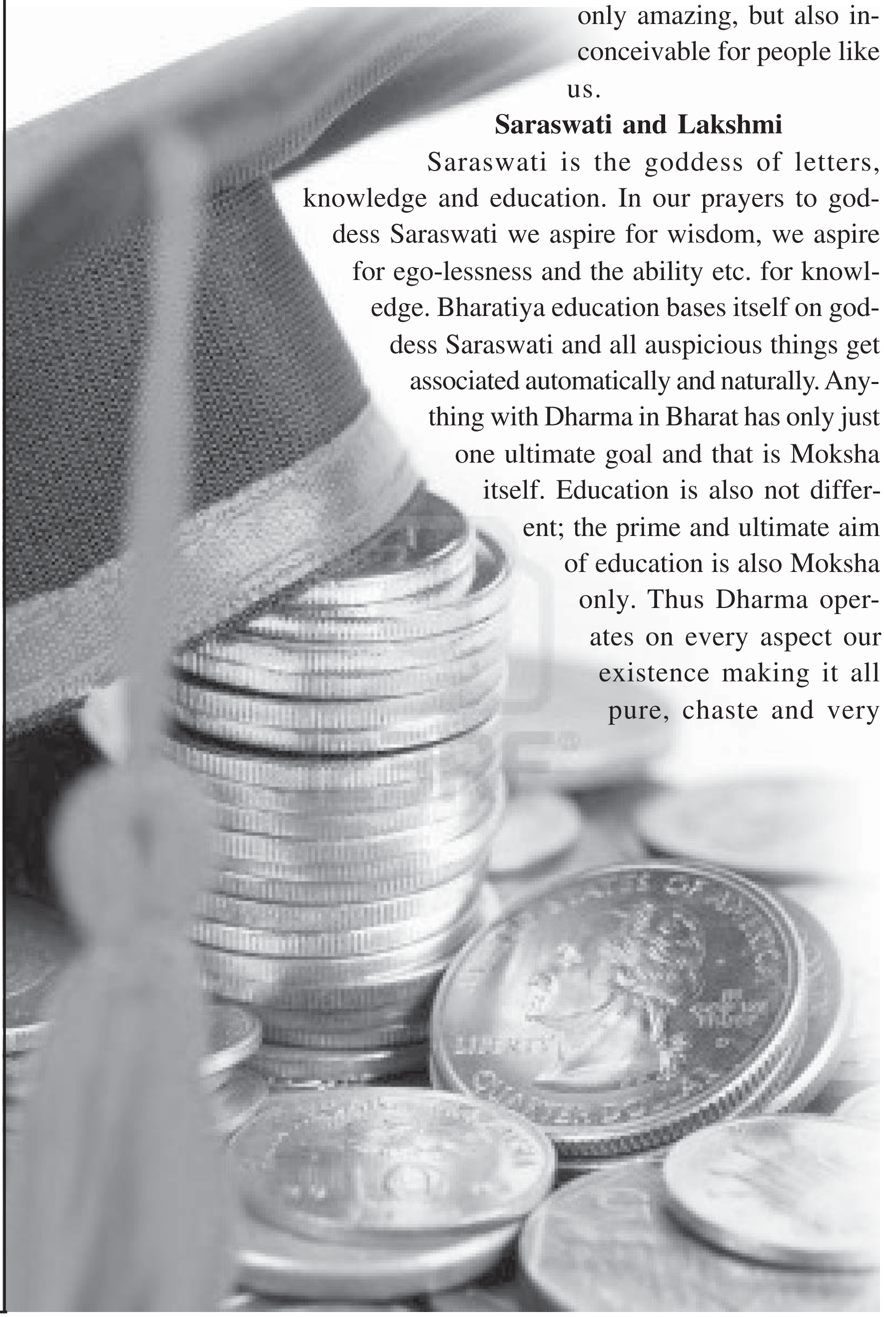

Saraswati and Lakshmi

Saraswati is the goddess of letters, knowledge and education. In our prayers to goddess Saraswati we aspire for wisdom, we aspire for ego-lessness and the ability etc. for knowledge. Bharatiya education bases itself on goddess Saraswati and all auspicious things get associated automatically and naturally. Anything with Dharma in Bharat has only just one ultimate goal and that is Moksha itself. Education is also not different; the prime and ultimate aim of education is also Moksha only. Thus Dharma operates on every aspect our existence making it all pure, chaste and very

Education is holy and spiritual for us, and at the same time, wealth and property is also spiritual and holy for us. But there is one thing to all, and that is Dharma. Dharma stands as an all embracing umbrella, bearing upon everything, and influencing everything. In other worlds, all legitimate steps should bear the unmistakable mark of Dharma, and it should be onlythrough Dharma that everything ought to be done. Anything, when performed through Dharma shall essentially be divine, and shall automatically take one to Moksha.

noble efforts.

Naturally, the whole things make education such a chaste, noble and spiritual affair, and it is nothing less than anything holy. All involvement with education thus becomes involvement with goddess Saraswati and all involved persons in whichever capacities with education are doing spiritual and holy work. Acharyas are the ultimate path providers, and educational administrators are equally spiritual. Everyone remains conscious of "Sa Vidya Ya Vimuktaye" on a routine.

Lakshmi is other goddesses for the Hindus, the goddesses of prosperity and property. Renunciation is a stage and state of mind and this state of mind has to be spontaneous. Renunciation alone shall not make one special or great, it is the drive to renunciation, the longing to that and the stage such of mind that makes one special. Renunciation is not compulsory, it is not prescribed, it is not aspired, and it is what should happen naturally. Whether or not this happens also shall make no difference to the person concerned or to the respect he might be commanding. Lakshmi is to be aspired for, as the Purusharthas explicitly prescribe of acquisition of Artha. Purusharthas clearly teaches that one cannot acquire Artha without a desire of Kama for Artha, so the desire for material wealth or Artha must also be present. Hence property or material wealth must be desired and acquired. Normally all spiritual teachings other than those of Bharat teach the opposite, they ask people to give away, give up or renounce, and there is no explanation as to if everyone shall do so, how will the world be. Or am I to presume that the European religions knew that no one shall take them serious?

Different deities

In a word, Saraswati is significant at appropriate space, Lakshmi is significant at another appropriate space and another deity is appropriate at its proper space. The ancient wisdom of Bharat had envisaged and worked into such subtle aspects of human as well as social existence and difficulties so related. On another plane, should one look at Siva, one can see the same Siva in different forms for different contexts

Saraswati is the deity for education and Lakshmi is the deity for wealth. They both are deities in their respective places. Normally, it doesn't happen for them to assume different spaces other than their own, and normally such thoughts do not occur to common perception and ingenuity. In another words, crisscrossing just do not happen at all, until, of course, someone makes it so.

Saraswati Lakshmi mixing up

Crisscrossing of deities do not happen. But then, here is a situation of a crisscrossing, Saraswati getting Mixed up with Lakshmi. Of course this happens synthetically and by human creation, and this, precisely is the point in this write up.

Education is holy and spiritual for us, and at the same time, wealth and property is also spiritual and holy for us. But there is one thing to all, and that is Dharma. Dharma stands as an all embracing umbrella, bearing upon everything, and influencing everything. In other worlds, all legitimate steps should bear the unmistakable mark of Dharma, and it should be only through Dharma that everything ought to be done. Anything, when performed through Dharma shall essentially be divine, and shall automatically take one to Moksha.

The present world

We are living in a world where the impact of materialism is untold. Hindus do not deny materialism and insist on renouncing everything, like the others, Hindus accept and approve

of material possession of wealth, but through Dharma. This of course does not make the Hindus 'materialistic' as Europe understand materialism.

Saraswati becoming Lakshmi is rhetoric used here,rhetoric to signify more than one thing. It explicitly presents the mixing up of deities out of context, and implicitly speaks of mixing up money with education. There is a huge gap here between what is the case and what ought to be the case.

Present education scenario

From what education ought to be, and what education scenario had come to be, there are serious difficulties. We know well that an archetype education in the ancient Bharatiya pattern is not possible any longer, and we do not aspire for a reversal through time also. But people of Bharat always shall wish to reinvent the Vedic society in any modern times, through Sanskriti. The point to remember is a simple one, we are still living Vedic people, reinventing and reclaiming Vedic Sanskriti in any given time of change or difference.

Times have changed, but the Sanskriti remains the same. Education structure and details shall change, but the spirit if education for Bharatiyas must not change. Education still is for 'Vimukti', and in its details it may differ much from the Vedic times, but the spirit still is the same. Saraswati remains Saraswati through times.

Commercialisation of education mixes up Saraswati with Lakshmi. Acquisition of material property is suggested, but through Dharma. Now when Lakshmi is mixed up with Saraswati, Dharma is lost. When Dharma is not maintained, everything is lost, and one ceases to be human. Where Dharma is lost, values are automatically lost. When values are lost in any society, the society decays and dies. Precisely, this is what had happened to Pakistani society in few decades.

For Bharat, the great preserver of Dharma is the Hindu Dharma. With the near complete exemption of Hindus from Pakistani society, they near chaos though they are only second or third generation separate people from Bharat.

Redemption of money based education

Paying huge amount of money for education is actually completely non Bharatiya phenomenon. But then a large section of society promote this. Parents want children to get whatever education of their desire and they shall pay to make it happen. This situation gave rise to educational institutions those make the whole thing a huge business. Here, values gets far flung, and when values get far flung, education fails to refine human existence. Such humans shall exist through serious self-centeredness, and become misfits to the society. When they become old, frustrations shall set in, and death comes to them through miseries. During youth they live through negation, and during old age they die through frustration.

So what have they achieved in life through all these education? What good they do to any other human beings, leave alone society? And above all, what kind of society they created for themselves?

The chief point here is losing values. The serious method of preserving, protecting and transmitting values to future generation is through Dharma, and the only way to keep Dharma in operation shall be through Hindu Dharma. My suggestion for the problem of Saraswati becoming Lakshmi is strongly through reinforcing Hindutva.

Sankaracharya single handily achieved the resurgence of Hindu Dharma from total nonexistence of Hindutva. Shivaji Maharaj made the surrendering Hindus great fighters. Today's education scenario demands reassuring Hindutva completely. The only way to implement Dharma is through Hindutva and the only redemption becomes implementation of Hindutva. We can separate Lakshmi from Saraswati. ❑

(Professor of Philosophy, The Maharaja Sayajirao University of Baroda)

Youth Icon Dr.Manjul Bhargava

❑ **Er.Hemendra Nagar**

India has a great tradition in mathematics. Indian math ematicians have made a number of contributions to mathematics that has significantly influenced scientists and mathematicians since ancient time to the modern era. These include place-value arithmetical notations, the use of the ruler, the concept of zero, and, most importantly, the Arabic-Hindu numerals predominantly used today and likely into the future. A large number of Indian-origin mathematicians are working in different countries of the world and producing new knowledge and prestige for India. The latest name to this list is Dr.Manjul Bhargava.

Dr.Manjul Bhargava a Canadian-American mathematician of Indian-origin was among four winners of the celebrated award, the Fields Medal. The Fields Medal, established by Canadian mathematician John Fields, is regarded as akin to a Nobel Prize for mathematics and comes with a 15,000 Canadian dollar (£8,000) cash prize. The Fields Medal is often described as the "Nobel Prize of Mathematics" and for a long time was regarded as the most prestigious award in the field of mathematics. However, in contrast to the Nobel Prize, the Fields Medal is awarded every four years. The Fields Medal also has an age limit: a recipient must be under age 40 on 1 January of the year in which the medal is awarded. The under-40 rule is based on Fields' desire that "while it was in recognition of work already done, it was at the same time intended to be an encouragement for further achievement on the part of the recipients and a stimulus to renewed effort on the part of others". The medal was first awarded in 1936 to Finnish mathematician Lars Ahlfors and American mathematician Jesse Douglas.

Childhood & Early Life

Manjul Bhargava was born in Ontario, Canada. His parents V. P. Muraleedharan and Meera were immigrants from India and his mother worked as a mathematician at Hofstra University. Mother Meera was first mathematics teacher of Manjul. She tutored him in mathematics from a young age and Manjul excelled in the

Dr.Manjul Bhargava a Canadian-American mathematician of Indian-origin was among four winners of the celebrated award, the Fields Medal. The Fields Medal, established by Canadian mathematician John Fields, is regarded as akin to a Nobel Prize for mathematics and comes with a 15,000 Canadian dollar (£8,000) cash prize. The Fields Medal is often described as the "Nobel Prize of Mathematics" and for a long time was regarded as the most prestigious award in the field of mathematics. However, in contrast to the Nobel Prize, the Fields Medal is awarded every four years. The Fields Medal also has an age limit: a recipient must be under age 40 on 1 January of the year in which the medal is awarded.

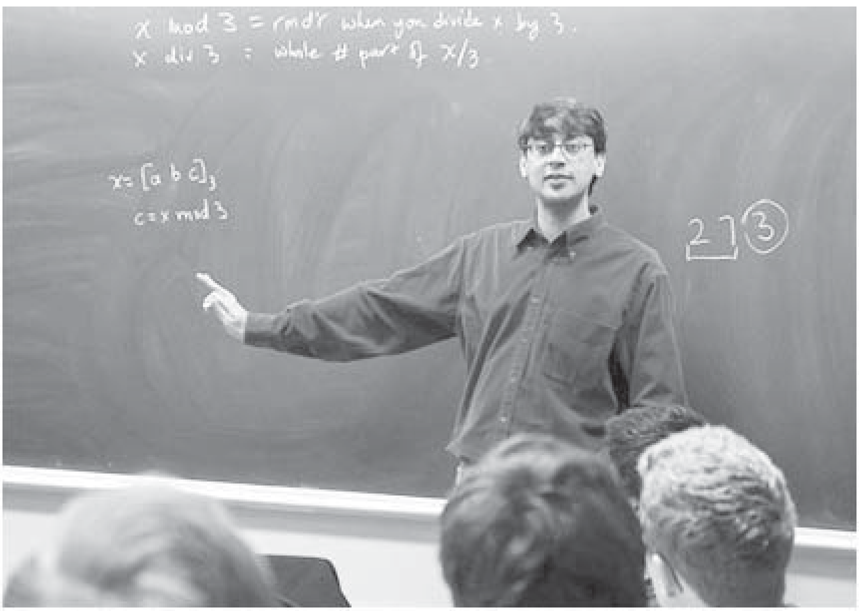

subject at school. By the time Manjul was 14, he had completed all of his high school math and computer science courses.

Manjul Bhargava graduated from Plainedge High School in North Massapequa in 1992 as the class valedictorian. He proceeded to obtain his B.A. from Harvard University in 1996. As a brilliant student, Manjul won the 1996 Morgan Prize for his research as an undergraduate. Manjul was awarded a 'Hertz Fellowship' which enabled him to pursue his doctorate from the Princeton University. He was supervised by 'Andrew Wiles' and completed his Ph.D. in 2001. In his Ph.D. thesis, Manjul generalized Gauss's classical law for composition of binary quadratic forms to many other situations. His results yielded many practical applications, including the parametrization of quartic and quintic orders in number fields.

Bhargava is best known for his work on number theory, especially the "GAUSS COMPOSITION LAW", which he applied to count rings of small rank and to bind the average rank of elliptic curves according to the award citation. Number theory or, in older usage arithmetic is a branch of pure mathematics devoted primarily to the study of the integers. It is sometimes called "The Queen of Mathematics" because of its foundational place in the discipline. Number theorists study prime numbers as well as the properties of objects made out of integers or defined as generalizations of the integers. Ancient Indian mathematician Aryabhatt, Brahmagupta, Bhaskara etc. also did work in this field.

The soft spoken, boyish mathematician currently serves as the R.Brandon Fradd Professor of mathematics at "Princeton University" and the "Stieltjes" Professor

of Number Theory at Leiden University and also holds Adjunct Professorships at the Tata Institute of Fundamental Research, the Indian Institute of Technology, Mumbai, and the University of Hyderabad. Bhargava is also an accomplished tabla player, having studied under gurus such as Zakir Hussain. He also studied Sanskrit from his grandfather Purushottam Lal Bhargava, a well-known scholar of Sanskrit and ancient Indian history. Manjul is an admirer of Sanskrit poetry.

He has won several awards and honors for his research and achievements and in 2013, was elected to the "United States National Academy Of Science", one of the highest disciplinary academic bodies in the country that houses subject matter experts who advice the government on issues related to Science and Technology.

Bhargava was awarded the Fields Medal in 2014. According to the International Mathematical Union citation, he was awarded the prize "for developing powerful new methods in the geometry of numbers, which he applied to count rings of small rank and to bound the average rank of elliptic curves. Bhargava "has his own perspective that is remarkably simple compared to others" said ANDREW GRANVILLE, a number theorist at the University of 'Montreal'. "Somehow, Manjul extracts ideas that are completely new or are entwisted in a way that changes everything. But it all feels very natural and unforced - it's as if Manjul found the right way to think".

Bhargava calls himself "an Indian at heart". In collaboration with Arul Shankar, he proved that the average rank of all elliptic curves over 'Q' (when ordered by height) is bounded. The duo also proved the 'Birch and Swinnerton - Dyer conjecture for a positive proportion of elliptic curves. According to an interview the 'Princeton University' professor gave to Quanta Magazine, Manjul said, German maths wizard Carl Friedrich Gauss showed that if two numbers - each sum of two perfect squares - are multiplied, the result will also be the sum of two perfect squares. Manjul Bhargava, whose grandfather was a Sanskrit professor in Rajasthan, said he had once seen in Sanskrit manuscripts, a generalisation of this same law, credited to Brahmagupta - an Indian mathematician in 628 CE.

Bhargava was awarded the "Clay Research" award in 2005.The same year he also won the "Leonard M. and Eleanor B. Blumenthal" award for the Advancement of Research in Pure Mathematics and "SASTRA Ramanujan Prize". In 2012, Bhargava became the inaugural recipient of the "Simons Investigator" award.He was honored with the "PADMA BHUSHAN", the highest civilian award of India, in 2015.

Attached to the country of his parents, Bhargava travels to India often and collaborates with the "Tata Institute of Fundamental Research as well as "The Indian Institutes of Technology" on pedagogical issues. We Hats off to such a genius Indian origin Intellect. ❑

(Disha Academy, Pali, (Rajasthan))

शिक्षा की नींव, प्राथमिक शिक्षा

❑ अजय नावरिया

भारतीय संविधान के अनुसार बुनियादी शिक्षा एक आधारभूत अधिकार है। यह एक समवर्ती विषय भी है, जिस पर भारत की प्रत्येक चुनी हुई सरकार को यथासमय और यथासंभव फैसले करना और उन्हें राष्ट्रहित में क्रियान्वित कराना होता है। क्रियान्वयन एक प्रशासनिक उत्तरदायित्व है। शिक्षा में गुणवत्ता और उसका अधिकाधिक प्रसार इसी प्रशासनिक अमले की सतर्कता, जागरुकता और जिम्मेदारी पर निर्भर करता है। यह देखा गया है कि जहाँ उच्च प्रशासनिक अधिकारी अपनी जिम्मेदारियों को प्राथमिकता और प्रतिबद्धता से निभाते हैं, वहाँ शिक्षा के स्तर और गुणवत्ता में आमूल-चूल परिवर्तन आते हैं। भारत के कई राज्य और अनेक जिले इसके जीवंत उदाहरण हैं। प्राथमिक शिक्षा पर विचार करते हुए यह जरूरी है कि भारतीय समाज के सामाजिक-सांस्कृतिक स्वरूप को समझ लिया जाए। भारतीय समाज को देखने के कई दृष्टिकोण हो सकते हैं। एक तो यह कि भारतीय समाज मोटे तौर पर शहरी, कस्बाई और ग्रामीण क्षेत्रों में विभाजित है। शहरी और कस्बाई क्षेत्रों की तुलना में ग्रामीण भारत की दशा अधिक शोचनीय है।

गाँधीजी कहते थे कि भारत की आत्मा गाँवों में बसती है। भारतीय ग्राम ही वास्तविक सामाजिक-सांस्कृतिक संरचना को कमोबेश अब भी बचाए हुए हैं। आजादी के बाद भारतीय ग्राम-व्यवस्था में धीरे-धीरे बदलाव आया है। आजादी से पहले और बाद के ग्रामीण समाज में उल्लेखनीय अंतर दिखाई देता है। खासकर सन 1990 के बाद यह अंतर राजनीति और समाज दोनों में स्पष्ट दिखाई देता है। शिक्षा के प्रति सामाजिक जागरूकता और लगाव के संकेत भी मिलने लगते हैं। भारतीय गाँवों की सामाजिक संरचना जाति आधारित है। अधिकतर समस्याओं की वजह इसी जाति-व्यवस्था की कोख में छिपी है। हैरानी की बात यह है कि जाति की इस व्यवस्था ने धर्म के कठोर पठार को भी तोड़ कर उसमें अपनी पैठ बना ली। भारत में आज कोई ऐसा धर्म नहीं है, जिसमें जाति की घुसपैठ या उसका

प्राथमिक शिक्षा को शिक्षा का मेरुदंड माना जाता है। उच्च शिक्षा की गुणवत्ता, प्राथमिक शिक्षा की गुणवत्ता पर टिकी होती है। अगर प्राथमिक स्तर को ही सुदृढ़ और रोचक बना दिया जाए तो बाद की सारी सरकारी कोशिशें जरूर कामयाब हो सकती हैं। पश्चिम के कई देशों में, खासकर विकसित देशों में शिक्षा के प्राथमिक स्तर पर बहुत अधिक ध्यान दिया जाता है। प्राथमिक स्तर पर ही छात्र-छात्राओं में शिक्षा के प्रति अनन्य अनुराग पैदा कर दिया जाता है। साथ ही उनमें कारीगरी या कौशल के कर्मों के प्रति आदर की भावना विकसित की जाती है। भारत के ग्रामीण क्षेत्रों में स्थिति इसके बिल्कुल विपरीत है। ग्रामीण क्षेत्रों में विद्यालय की स्थिति, अध्यापकों का आचरण और छात्र-छात्राओं से बर्ताव, समाज के दूसरे अंग और निकायों का दृष्टिकोण, वास्तव में, शिक्षा-विरोधी कहा जा सकता है। सामान्यतया कहा जाता है कि ग्रामीण जनता गरीबी के कारण शिक्षा प्राप्त नहीं करती। पर यह अधूरा सत्य है।

वर्चस्व न हो। जो हिंदू, हिंदू धर्म की जाति-व्यवस्था से दुखी होकर दूसरे धर्मों में जाते हैं, वे वहाँ भी वही ऊँच-नीच पाते हैं।

आजादी के बाद सभी जातियों में शिक्षा-प्राप्ति के प्रयास दिखाई दिए। सवर्ण जातियों के सदस्य पहले भी शिक्षा से कमोबेश जुड़े हुए थे, पर आजादी के बाद ग्रामीण क्षेत्रों के अनेक सवर्ण समुदाय भी शिक्षा के प्रति तत्पर हुए। इससे पहले अधिकतर शिक्षा शहर केंद्रित गतिविधि मानी जाती थी। ग्रामीण समाज अपने परंपरागत काम-धंधों में लगा था। सवर्ण समुदायों की तरह दलित-पिछड़ी जातियों और जनजातियों में भी शिक्षा के महत्त्व को समझा जाने लगा। दलितों और पिछड़ों में शिक्षा के प्रति लालसा का मुख्य कारण दलित आंदोलन और बाबासाहेब आंबेडकर के विचारों के प्रसार को माना जाता है। इन वर्गों को रोजगार के अलावा सम्मान की आकाँक्षा ने भी शिक्षित होने के लिए प्रेरित किया। यही स्थिति स्त्री शिक्षा के मामले में दिखाई देती है। यह भारतीय इतिहास की पहली परिघटना है जब दलितों, पिछड़ों और जनजातीय समुदायों में मध्यवर्ग का उदय हुआ। सवर्ण जातियों में तीनों वर्ग बहुत पहले से रहे हैं, पर इन समुदायों में सिर्फ निम्न वर्ग रहा। किसी भी देश के विकास में उसके मध्यवर्ग की महत्त्वपूर्ण भूमिका रही है। भारत के संदर्भ में कहा जाए तो यह प्रत्येक जाति समुदाय के लिए जरूरी है कि उसका अपना एक मध्यवर्ग हो। जिस जाति का जितना बड़ा मध्यवर्ग होगा, वह उतनी ही शक्तिशाली और सत्ता संपन्न होगी।

प्राथमिक शिक्षा को शिक्षा का मेरुदंड माना जाता है। उच्च शिक्षा की गुणवत्ता, प्राथमिक शिक्षा की गुणवत्ता पर टिकी होती है। अगर प्राथमिक स्तर को ही सुदृढ़ और रोचक बना दिया जाए तो बाद की सारी सरकारी कोशिशें जरूर कामयाब हो सकती हैं। पश्चिम के कई देशों में, खासकर विकसित देशों में शिक्षा के प्राथमिक स्तर पर बहुत अधिक ध्यान दिया जाता है। प्राथमिक स्तर पर ही छात्र-छात्राओं में शिक्षा के प्रति अनन्य अनुराग पैदा कर दिया जाता है। साथ ही उनमें कारीगरी या कौशल के कर्मों के प्रति आदर की भावना विकसित की जाती है। भारत के ग्रामीण क्षेत्रों में स्थिति इसके बिल्कुल विपरीत है। ग्रामीण क्षेत्रों में विद्यालय की स्थिति, अध्यापकों का आचरण और छात्र-छात्राओं से बर्ताव, समाज के दूसरे अंग और निकायों का दृष्टिकोण, वास्तव में, शिक्षा-विरोधी कहा जा सकता है। सामान्यतया कहा जाता है कि ग्रामीण जनता गरीबी के कारण शिक्षा प्राप्त नहीं करती। पर यह अधूरा सत्य है। वास्तव में, यह दूसरी कमियों और गैर-जिम्मेदारियों को छिपाने का एक तरीका भर है। ऐसा नहीं कि ग्रामीण क्षेत्रों में गरीबी के कारण विद्यार्थी नहीं आते। अगर ऐसा होता तो केरल और त्रिपुरा जैसे राज्यों में शिक्षा का स्तर इतना ऊँचा कैसे होता। पूर्वोत्तर के राज्यों में शिक्षा का प्रतिशत क्यों बढ़ रहा है?

भारत में शिक्षा की समस्या बहुत जटिल है। अधिकतर राजनीतिक दल सामान्य जनता तक शिक्षा को पहुँचाने से डरते हैं। इस मामले में दलित और पिछड़े वर्गों के ज्यादातर राजनेताओं की नीयत भी संदिग्ध है। ग्रामीण क्षेत्रों में पहली समस्या यही है कि वहाँ प्राथमिक विद्यालयों की संख्या बहुत कम है, जिसकी वजह से छोटे बच्चों को दूसरे गाँवों के विद्यालयों में जाना पड़ता है। अधिकतर माता-पिता इसलिए भी अपने बच्चों को पढ़ने नहीं भेजते। खासकर, लड़कियों का प्रतिनिधित्व ऐसे स्थानों पर नगण्य होता है। जो बच्चे इस बाधा को पार कर विद्यालय तक पहुँचते हैं, वहाँ अध्यापकों की कमी उनके उत्साह को ठंडा कर देती है। उत्तर भारत का असमान मौसम भी प्राथमिक शिक्षा में रुकावट बनता है। यहाँ जितनी तेज गर्मी पड़ती है उतनी ही तेज सर्दी भी और विद्यालयों में उचित संसाधनों का पर्याप्त अभाव रहता है। कई जगह तो पक्की इमारत ही नहीं है। विद्यालयों की ऐसी हालत शहरों में भी कई जगह देखी जा सकती है। ग्रामीण क्षेत्रों में हालत और बदतर है। खुले में बैठ कर पढ़ना छोटे बच्चों के लिए अत्यंत कष्टकारी होता है। इसके अलावा बड़ी समस्या है शौचालयों की। इन विद्यालयों में या तो शौचालय होंगे ही नहीं, संयोग से होंगे भी तो वे उपयोग लायक नहीं होंगे। ऐसे में बच्चे खुले में जाने के लिए अभिशप्त हैं। बच्चियों के मामले में यह स्थिति और विकट हो जाती है।

प्राथमिक स्तर पर ही स्कूल छोड़ने की एक बड़ी वजह शौचालयों की कमी है। इसके लिए जाति आधारित उत्पीड़न भी उतना ही जिम्मेदार है। इन सब अभावों एवं कठिनाइयों को ध्यान में रखते हुए हमें संकल्पबद्ध होना चाहिए कि प्राथमिक शिक्षा की नींव को सुदृढ़ किए बिना उच्च शिक्षा में गुणवत्ता नहीं लाई जा सकती। ग्रामीण क्षेत्रों से इसकी शुरुआत की जानी चाहिए। ❑

भाषाः राष्ट्र की आत्मा

❑ प्रकाश वया

भाषा मनुष्य को ईश्वर का विलक्षण उपहार है। मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है, समाज में रहना उसकी नियति है, सामाजिक सरोकारों के निर्वहन में भाषा निश्चित रूप से सशक्त माध्यम है। व्यक्ति के अन्तस में भावों और विचारों का प्रवाह अहर्निश चलता रहता है और भाषा के माध्यम से उनका प्रकटीकरण होता है, इस अपेक्षा से व्यक्तित्त्व निर्माण में भाषा की अहम् भूमिका होती है, व्यक्ति जब बोलता है तो उसका समग्र व्यक्तित्व प्रकट में आ जाता है। भाषा यानी वाणी मनुष्य का शृंगार कर उसे सलीके और तरीके से जीने का आधार देती है। व्यक्ति, परिवार, समाज और राष्ट्र की अपेक्षा से भाषा का अतिशय महत्त्व है। सच्चाई तो यह है कि भाषा किसी भी राष्ट्र का प्राण तत्व है, आत्मा है उसके उत्कर्ष का साधन है।

देव वाणी संस्कृत सुता हिन्दी हमारी राष्ट्र भाषा है, हमारी पहचान है इसका संरक्षण और संवर्धन हमारी नियति हो कर राष्ट्र धर्म है, परन्तु विडंबना यह भी है कि आजादी के 70 सालों बाद भी राष्ट्र भाषा हिन्दी को जो सम्मानजनक स्थान राष्ट्र जीवन में मिलना चाहिए था, चिन्ता और चिन्तन का विषय यह है कि आज भी मेकॉले के मानस पुत्र अंग्रेजी भाषा की अन्तर्राष्ट्रीयता का बेसुरा राग अलाप कर अपनी नासमझी का परिचय दे रहे हैं इन तथाकथित भाषाविदों से गुजारिश है कि दुनिया के छोटे बड़े देशों की भाषिक स्थिति का निरपेक्ष भाव से अध्ययन करने के बाद अपनी मानसिकता को सच्चाई के धरातल पर परखने का श्रम करें तो निश्चित रूप से यह लगेगा कि हमारी राष्ट्र की मनीषा के साथ साजिश के तहत छल कर उसे कुंद करने का किस हद तक सफल प्रयास हुआ है।

किसी भी राष्ट्र की संस्कृति, धर्म, दर्शन और गौरवशाली परम्पराओं को समझने के लिए उसकी अपनी भाषा ही सशक्त माध्यम हो सकती है सच्चाई तो यह भी है कि देव वाणी संस्कृत, प्राकृत और हमारी अपनी अन्य क्षेत्रीय भाषाओं के बूते पर ही यह महान राष्ट्र दुनिया का सिरमौर बना। विश्व गुरु तक का दर्जा हांसिल कर सका, यह एक ऐतिहासिक सच्चाई है जिस पर हमें स्वाभाविक रूप से गर्वानुभूति होनी चाहिए। विविधता में एकता के दर्शन कराने वाली हमारी साँस्कृतिक विरासत हमारी अनमोल थाती है,

सम्प्रति जो हमारी भाषा के हालात हैं, उनके सापेक्ष हिन्दी प्रेमियों को अपनी सकल अन्तश्चेतना का निवेश करते हुए वैचारिक क्रांति और जनजागरण के लिए पूरी ईमानदारी से जुटना होगा। भाषा के सम्यक उपयोग के लिए उसके मानक स्वरूप को भी समझना आवश्यक है, परन्तु आज हिन्दी भाषा को लेकर हमने खासकर विद्यार्थियों ने हिन्दी को अपनी जेब का लड्डू समझ लिया है, अन्य विषयों की अपेक्षा इस विषय पर ध्यान नहीं देना तथा अध्यापकों में हिन्दी तो कोई भी पढ़ा देगा जैसी मानसिकता भी मातृभाषा की दुर्दशा के लिए जिम्मेदार है, इस हकीकत को आज नहीं तो कल स्वीकार करना पड़ेगा। प्राथमिक स्तर पर भाषा शिक्षण की ओर ध्यान दिया जाना नितान्त आवश्यक है तथा वर्ण विचार, शब्द रचना और वाक्य विन्यास का बुनियादी अभिज्ञान कराकर बालक की भाषा को आधार दिया जा सकता है।

जिसका संरक्षण एवं संवर्धन हर जाग्रत मनीषा का धर्म है। राष्ट्र भाषा हिन्दी माँ भारती का शृंगार है, आभूषण है। अनुभूत सच्चाई यह है कि हमारी अपनी भाषा ही इस विशाल और महान राष्ट्र की एकता और अखण्डता को हमेशा हमेशा के लिए अक्षुण्णता प्रदान कर सकती है, परन्तु विदेशी ताकतों ने सोची-समझी रणनीति के तहत हमारी संकल्पना और अवधारणा पर प्रहार कर करने में भी कोई कसर नहीं छोड़ी है। सागर का गाम्भीर्य विभिन्न दिशाओं से आने वाली नदियों को आत्मसात कर लेता है, ठीक उसी तरह से मातृ भाषा हिन्दी ने अपने सागरवर गंभीरा स्वरूप दर्शाते हुए अपने शब्द सागर में विदेशी भाषाओं के शब्दों को आत्मसात कर लिया जो कि अन्य भाषाओं की अपेक्षा से बेमिसाल है। हिन्दी पूर्णरूपेण वैज्ञानिक भाषा है, व्याकरण भाषारूपी रथ की वल्गा (लगाम) है जो उसके प्रांजल और परिमार्जित रूप को प्रकट करती है, इसलिए भाषा के बुनियादी तत्वों की जानकारी और समझ नितान्त आवश्यक है। असल में माँ भारती की जिह्वा (भाषा) से ही उसकी संस्कृति, धर्म दर्शन, ज्ञान-विज्ञान मुखरित होता है, इसलिए हमारी हिन्दी भाषा का जन भाषा के रूप में विकसित होना भी समय की माँग है।

सम्प्रति जो हमारी भाषा के हालात हैं, उनके सापेक्ष हिन्दी प्रेमियों को अपनी सकल अन्तश्चेतना का निवेश करते हुए वैचारिक क्रांति और जनजागरण के लिए पूरी ईमानदारी से जुटना होगा। भाषा के सम्यक उपयोग के लिए उसके मानक स्वरूप को भी समझना आवश्यक है, परन्तु आज हिन्दी भाषा को लेकर हमने खासकर विद्यार्थियों ने हिन्दी को अपनी जेब का लड्डू समझ लिया है, अन्य विषयों की अपेक्षा इस विषय पर ध्यान नहीं देना तथा अध्यापकों में हिन्दी तो कोई भी पढ़ा देगा जैसी मानसिकता भी मातृभाषा की दुर्दशा के लिए जिम्मेदार है, इस हकीकत को आज नहीं तो कल स्वीकार करना पड़ेगा। प्राथमिक स्तर पर भाषा शिक्षण की ओर ध्यान दिया जाना नितान्त आवश्यक है तथा वर्ण विचार, शब्द रचना और वाक्य विन्यास का बुनियादी अभिज्ञान कराकर बालक की भाषा को आधार दिया जा सकता है। प्रतिभाशाली बालकों पर हिन्दी भाषा की उपेक्षा भारी पड़ती नजर आ रही है, बोर्ड परीक्षा परिणामों की सम्यक समीक्षा की जाये तो एक तथ्य निश्चित रूप से उभर कर आयेगा कि बालक हिन्दी को छोड़ कर अन्य विषयों में बहुत ज्यादा अंक हासिल कर रहा है, परन्तु हिन्दी में पिछड़ रहा है, ऐसा क्यों कर हो रहा है? समय रहते हमें इस सच्चाई को समझना चाहिए अन्यथा राष्ट्र भाषा हिन्दी के उत्कर्ष को लेकर हिन्दी प्रेमियों की चिन्ता का शमन हम नहीं कर पायेंगे। सच्चाई तो यह है कि हिन्दी भाषा जैसी बोली जाती है वैसी लिखी जाती है यानी वर्तनी और उच्चारण का सीधा सम्बन्ध है, उच्चारण की अपेक्षा हमारी जबान का संभलना नितान्त आवश्यक है क्योंकि ह्रस्व-दीर्घ मात्राओं व अनुस्वार और अनुनासिक वर्णों की प्रयुक्ति से शब्दों के अर्थ बदलते हैं, इसलिए उच्चारण का सम्यक होना अपेक्षित है तभी वर्तनी की शुद्धता सुनिश्चित हो सकेगी। सम्यक उच्चारण और वर्तनी की शुद्धता हमारी भाषा का शृंगार है तथा सभी शब्द अपनी सार्थकता प्रकट करने में सक्षम होते हैं, इसलिए भाषाविदों से विनम्र गुजारिश है कि वे इस दिशा में सार्थक प्रयास कर 'हिन्दी' की सही मायने में सेवा करके ही वीणा पाणि माँ शारदा के चरणों में अपनी अर्चना के पुष्प अर्पित कर सकते हैं। हिन्दी हमारी कोई ऐसी वैसी भाषा नहीं है, कहा भी है-

'ऐसी वैसी ना है, हमारी हिन्दी भाषा।
हिन्दी सूर, कबीर, और तुलसी की भाषा।।'

हमारी भाषा में सरलता और मृदुलता भी गजब की है, इससे जो अमिय रस निर्झरित होता है उसका आस्वादन कर हमें विलक्षण आत्मानुभूति होती है, हमारा शब्द भंडार बहुत समृद्ध है। सुखद आश्चर्यजनक स्थिति यह भी है कि इस महान राष्ट्र की भाषा अपनी सीमाओं को लाँघ कर दुनिया के कई देशों में पहुँच कर अपने वैश्वीकृत स्वरूप को प्रकट करने की ओर द्रुत गति से कदम ताल कर रही है। सच्चाई यह भी है कि हिन्दी भाषा मानवीय भावनाओं, संकल्पनाओं, महत्वाकांक्षाओं और संवेदनाओं को सहजता से प्रकट कर देने के भाषिक गुण से लबरेज है, इस अपेक्षा से हमारी भाषा का भविष्य अतिशय शानदार, जानदार और चमकदार लगता है। हमारे लिए गौरव का विषय है कि हमारी प्यारी भाषा ने विश्व की फ्रेंच, अरबी, रूसी, अंग्रेजी जैसी भाषाओं को पीछे छोड़ते हुए विश्व की नम्बर एक भाषा बन कर उन्हें पीछे छोड़ दिया है। कर्नाटक के ख्यातनाम शिक्षाविद डॉ. जयंती प्रसाद नौटियाल की शोध रिपोर्ट आज सारे देश में चर्चा का विषय बनी हुई है, विश्व में जो शिक्षाविद् हिन्दी के व्यापक प्रचार-प्रसार का बीड़ा उठाये हुए हैं उन्होंने भी नौटियाल की शोध रिपोर्ट को बिल्कुल तथ्यात्मक और सही स्वीकार किया है। विश्व की सात प्रमुख भाषाओं के मुकाबले आज 1270 मिलियन लोग हिन्दी भाषा को बोल रहे हैं, आश्चर्य इस बात को लेकर है जिस भाषा को हम अन्तर्राष्ट्रीय भाषा मान रहे हैं, लेकिन उसके बोलने वाले हमारी राष्ट्र भाषा के मुकाबले केवल केवल एक चौथाई लोग 340 मिलियन हैं, अमेरिका जैसे राष्ट्र ने हिन्दी

का ज्ञान जरूरी मानकर अपने स्कूलों और विश्व विद्यालयों में हिन्दी शिक्षण के लिए अरबों रुपयों का बजट जारी किया है।

तो आइए हिन्दी भाषा के संरक्षण और संवर्धन के लिए इन सकारात्मक परिस्थितियों का लाभ उठाते हुए पूरी ईमानदारी और आत्मीय भावों के साथ संकल्पित होकर जुट जायें यही श्रेयस्कर होगा, असल में इसकी शुरूआत हमें अपने घर परिवार से करनी होगी, हमारे घर के आँगन में क्रीड़ा करने वाले कन्हैया के मन में विदेशी भाषा के शब्दों को ठूँसने से बचना होगा, तुतलाती भाषा में बोलने वाले बालक के मुँह से अंग्रेजी के शब्द या रटाई गई तथाकथित कविताएँ सुनकर खुश होने की मानसिकता से परिजनों को बचना होगा। बच्चों को अंग्रेजी माध्यम के स्कूलों, जो कि एक व्यवसाय का हिस्सा बन चुके हैं इन पर लगाम की आवश्यकता है। आम तौर पर अभिभावकों के मन में अंग्रेजी माध्यम से दी जाने वाली शिक्षा के बारे में जो सोच है, उनके इस मिथक को भी कि अंग्रेजी के बिना हमारा बालक उच्च अध्ययन के क्षेत्र में आगे नहीं बढ़ सकता जन जागरण के माध्यम से सच्चाई का अभिज्ञान कराना भी नितान्त आवश्यक है।

ख्यातनाम कविवर –कमलाकर 'कमल' बोलता है कि आखिर हमारी हिन्दी भाषा क्या चाहती है ?

हिन्दी को अधिकार चाहिए, सब लोगों का प्यार चाहिए। निभने और निभाने वाला, वैचारिक व्यवहार चाहिए। हिन्दी देशी और विदेशी भाषाओं से बनी हुई है। अद्भुत सामंजस्य समन्वय, समरसता से सनी हुई है। इसको मानव की धरती पर मानवीय संस्कार चाहिए। हिन्दी को अधिकार चाहिए, सब लोगों का प्यार चाहिए।❑

(सेवानिवृत प्राध्यापक, हिन्दी)

शिक्षक शिक्षा से संस्कृति व संस्कारों का वाहक बने

राजस्थान शिक्षक संघ (राष्ट्रीय) सीकर का दो दिवसीय जिला स्तरीय शैक्षिक सम्मेलन 9 सितम्बर 2016 से राजकीय बालिका उच्च माध्यमिक विद्यालय धोद में आयोजित उद्घाटन सत्र के साथ प्रारम्भ हुआ। उद्घाटन सत्र में मुख्य वक्ता के रूप में बोलते हुए श्रीमान् महेन्द्र कपूर (अखिल भारतीय संघठन मंत्री, अखिल भारतीय राष्ट्रीय शैक्षिक महासंघ) ने कहा कि आदिकाल से ही शिक्षक समाज को दिशा प्रदान करता रहा है। भारत का इतिहास रहा है कि यहाँ के शिक्षकों के कुशल मार्गदर्शन के कारण ही यहां का समाज संस्कारित रहा है इसी के परिणाम स्वरूप भारतीय संस्कृति विश्व की श्रेष्ठ संस्कृति रह पायी है लेकिन दुर्भाग्यवश विभिन्न विदेशी ताकतों के आक्रमण व शासन से यहाँ की संस्कृति के मूल्यों का ह्रास हुआ और उसके परिणाम स्वरूप आज समाज एक विचित्र उहापोह की स्थिति में आकर खड़ा हो गया। अत: पुन: एकबार शिक्षक वर्ग पर यह दायित्व आया है कि शिक्षक शिक्षा व आचरण के माध्यम से समाज को दिशा प्रदान करके यहाँ गौरवमयी संस्कृति का पोषण करे।

उद्घाटन सत्र में मुख्य अतिथि के रूप में बोलते हुए सीकर सांसद पूज्य स्वामी सुमेधानन्द सरस्वती ने भी अपने उद्बोधन में इसी विचार को रेखांकित किया और कहा कि 1835 से मैकाले की शिक्षा पद्धति ने हमें भाव, भोजन, वस्त्र(वेशभूषा) व भाषा से विदेशी को श्रेष्ठ मानने की प्रवृति दी है। जिसके कारण आज का युवा पाश्चात्य भाववश त्याग के स्थान पर स्वार्थ को महत्त्व देता है। जिसकी परिणीती भ्रष्टाचार व अत्याचार के रूप में हुई है। इसी प्रकार भोजन में भारतीय भोजन के स्थान पर पाश्चात्य भोजन व पेय पदार्थ की ओर आकर्षित होना अपनी वेशभूषा को छोड़कर पाश्चात्य वेशभूषा को अपनाना तथा मातृ व राष्ट्रभाषा से आंग्लभाषा को श्रेष्ठ मानना इसी का परिणाम है अत: हमें इन विषयों पर ध्यान देकर पुन: भारतीयता के भाव को श्रेष्ठ बनानेवाला समाज निर्माण करना है।

विशिष्ठ अतिथि के रूप में बोलते हुए धोद विधायक श्रीमान् गोरधन वर्मा ने राज्य सरकार की उपलब्धियों के बारे में बताते हुए पाठ्यक्रम में परिवर्तन को ऐतिहासिक कदम बताया। उद्बोधन के इसी क्रम में सीकर भाजपा के पूर्व जिलाध्यक्ष श्रीमान् हरिराम रणवां ने कहा कि समाज से शिक्षक सदैव जुड़ा रहता है इसलिए शिक्षक का प्रभाव ही समाज पर सर्वाधिक होता है। अत: सरकारी व गैरसरकारी क्षेत्र के समस्त शिक्षकों को गुणवत्तापूर्ण शिक्षा से दिशा प्रदान करनी चाहिए। प्रान्तीय प्रतिनिधि के रूप में दिनेश कुमार शर्मा द्वारा संगठन की विचारधारा से अवगत करवाया गया। चुरू मण्डल अध्यक्ष श्रीमान् सम्पत सिंह ने सरकार के अच्छे कदमों की सराहना के साथ विद्यालयों के समय की अव्यवहारिकता पर आलोचना भी की तथा वक्ताओं के उद्बोधन से सहमति प्रकट करने के साथ ही सरकार व समाज से शिक्षक के लिए इस हेतु परिस्थितियाँ प्रदान करने की माँग भी की।

जिलामंत्री श्री विजय कुमार बुरडक द्वारा अपने प्रतिवेदन के माध्यम से जिले में सालभर में संगठन द्वारा किये गये शिक्षक, शिक्षार्थी व समाज के हेतु कार्यो का विवरण सविस्तार दिया गया। जिले के विद्यालयों से बोर्ड मेरिट में स्थान पाने वाले विद्यार्थियों व पुरस्कृत शिक्षकों का सम्मान भी मंच के माध्यम से किया गया। श्री भागीरथराम द्वारा काव्यगीत की भावमयी प्रस्तुति के पश्चात् जिलाध्यक्ष श्रीमान् मुकेश कुमार मीणा द्वारा धन्यवाद ज्ञापित किया गया। कार्यक्रम का संचालन जिलामंत्री श्री विजयकुमार द्वारा मंडल संगठन मंत्री श्रीमान श्यामसुन्दर स्वामी के निर्देशन में किया गया।

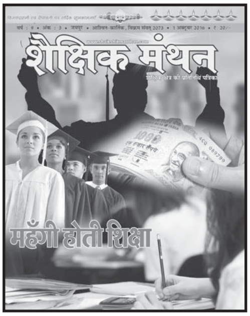

उच्च शिक्षा में बेहतर नतीजे हासिल करने के लिए राष्ट्रीय आय का 6 प्रतिशत खर्च किया जाना जरूरी है। उच्च शिक्षा में सुधार के लिए कई समितियों ने सुझाव दिए हैं। परंतु केंद्र व राज्य सरकारें गंभीर नहीं हैं। उच्च शिक्षा में सुधार के निमित्त आयोग ने सुझाव दिया है कि विविद्यालयों को संबद्ध महाविद्यालयों की समस्या से मुक्ति दिलाने के लिए महाविद्यालयों को स्वायत्तता प्रदान की जाए। किंतु दिलचस्प पहलू यह है कि इन सुझावों पर गौर फरमाने के बजाए सरकारें धड़ाधड़ महाविद्यालय खोल रही हैं और उन्हें विश्वविद्यालयों से संबंद्ध कर उन पर अतिरिक्त बोझ लाद रही हैं।

काफी कुछ होना बाकी

❑ **अरविंद जयतिलक**

जैसे खाड़ी युद्ध टीवी पर दिखाया जाने वाला पहला युद्ध था। उसी तरह यह (न्यूज एंकरों द्वारा पाकिस्तान के खिलाफ युद्ध की माँग) पहला सोशल मीडिया युद्ध हो सकता है।

शुभ संकेत यह है कि दुनिया में उच्च शिक्षा के मामले में भारत की स्थिति पहले से बेहतर हुई है। टाइम्स हायर एजुकेशन (टीएचई) की ताजा वर्ल्ड यूनिवर्सिटी रैंकिंग में दुनिया के शीर्ष विश्वविद्यालयों की नई सूची में भारत के 31 शिक्षण संस्थानों ने जगह बनाई है। रैंकिंग के मुताबिक बेंगलुरु का इंडियन इंस्टीट्यूट ऑफ साइंस भारत की ओर से शीर्ष स्थान पर है। उसकी रैंकिंग पिछले साल के मुकाबले 50 स्थान सुधरी है, पर विश्वविद्यालय स्तर पर रैंकिंग की 400 की सूची में सिर्फ दो भारतीय विश्वविद्यालय ही जगह बनाने में कामयाब हुए हैं। शीर्ष 200 की सूची में किसी भी भारतीय विश्वविद्यालय को जगह नहीं मिला है। अच्छी बात यह है कि दुनिया की शीर्ष 980 की सूची में दक्षिण एशिया क्षेत्र में भारत सितारा बनकर उभरा है। लेकिन यह स्थिति बहुत संतोषजनक नहीं है। इसलिए कि उच्च शिक्षा में दाखिले के मामले में भारत अभी भी चीन, थाईलैंड और मलेशिया से पीछे हैं। मौजूदा समय में भारत में यह आँकड़ा 20 प्रतिशत के आसपास है, जबकि चीन में यह 26 प्रतिशत, थाईलैंड में 48 प्रतिशत और मलेशिया में 40 प्रतिशत है। इससे साफ जाहिर होता है कि भारत में उच्च शिक्षा में सुधार की रफ्तार धीमी है जबकि शिक्षा पर होने वाला व्यय सकल घरेलू उत्पाद का 3.98 प्रतिशत तक जा पहुँचा है। दाखिले के अलावा शोध कार्य में भी भारत की स्थिति संतोषजनक

नहीं है। गौर करें तो दुनिया के विकसित देशों में प्रति 10 लाख में 4500 छात्र शोध कार्य में संलग्न हैं। स्कैंडिनेवियाई देशों में यह संख्या 6700 के आसपास है, जबकि भारत में 200 के आसपास है। यह स्थिति उच्च शिक्षा के लिए गंभीर चुनौती है। यह स्वाभाविक है कि जब उच्च शिक्षा में नामांकन की दर कम होगी तो शोध कार्य करने वाले भी कम होंगे। शिक्षाविदों का मानना है कि अगर भविष्य में भारत को सकल दाखिला अनुपात का लक्ष्य 30 प्रतिशत हासिल करना है और शोध छात्रों की संख्या बढ़ानी है तो उसे आने वाले वर्षों में विश्वविद्यालयों का इन्फ्रास्ट्रक्चर मजबूत करने के साथ 800 विश्वविद्यालयों और 35000 कॉलेजों की स्थापना करनी होगी।

मौजूदा समय में देश में तकरीबन 500 के आसपास विश्वविद्यालय और 22000 कॉलेज हैं। लेकिन इनसे उच्च शिक्षा की सुलभता साकार नहीं हो रही है। मौजूदा समय में उच्च शिक्षण संस्थानों के समक्ष जो सबसे बड़ी समस्या है, वह अध्यापकों की कमी और जरूरी संसाधनों का अभाव। एक आँकड़े के मुताबिक हर विश्वविद्यालय में तकरीबन 45 प्रतिशत से 52 प्रतिशत शिक्षकों के पद रिक्त हैं। इनमें 44.6 प्रतिशत प्रोफेसरों के पद और 51 प्रतिशत रीडरों के पद रिक्त हैं। इसी तरह 52 प्रतिशत पद लेक्चरर के रिक्त हैं। एक आँकड़े के मुताबिक 48 से 68 प्रतिशत शिक्षकों के सहारे पठन-पाठन का काम चलाया जा रहा है, जबकि प्रत्येक वर्ष विश्वविद्यालयों और कॉलेजों में छात्रों की संख्या बढ़ती जा रही है।

आज विकसित देशों में उच्च शिक्षा पर जहाँ कुल बजट का 6 से 7 प्रतिशत खर्च किया जाता है। वहीं भारत आज भी अपनी राष्ट्रीय आय का मात्र 0.42 प्रतिशत धन खर्च करता है। उच्च शिक्षा में बेहतर नतीजे हासिल करने के लिए राष्ट्रीय आय का 6 प्रतिशत खर्च किया जाना जरूरी है। उच्च शिक्षा में सुधार के लिए कई समितियों ने सुझाव दिए हैं। परंतु केंद्र व राज्य सरकारें गंभीर नहीं हैं। उच्च शिक्षा में सुधार के निमित्त आयोग ने सुझाव दिया है कि विविद्यालयों को संबद्ध महाविद्यालयों की समस्या से मुक्ति दिलाने के लिए महाविद्यालयों को स्वायत्तता प्रदान की जाए। किंतु दिलचस्प पहलू यह है कि इन सुझावों पर गौर फरमाने के बजाए सरकारें धड़ाधड़ महाविद्यालय खोल रही हैं और उन्हें विश्वविद्यालयों से संबंद्ध कर उन पर अतिरिक्त बोझ लाद रही हैं। कुकरमुत्ते की तरह उग आए इन महाविद्यालयों में न तो प्रशिक्षित अध्यापक हैं और न ही प्रायोगिक कार्य के लिए जरूरी संसाधन। एक आँकड़े के अनुसार आज 85 प्रतिशत इंजीनियरिंग और 40 प्रतिशत मेडिकल कालेज निजी क्षेत्र के हैं और उन पर सरकार का किसी तरह का नियंत्रण नहीं है। उच्च शिक्षा में सुधार के लिए केंद्र व राज्य सरकारों को कुछ कड़े फैसले लेने होंगे। शिक्षा के व्यावसायीकरण को रोकना होगा। विश्वविद्यालयों और महाविद्यालयों की संख्या बढ़ानी होगी। प्रशिक्षित अध्यापकों की नियुक्ति के साथ-साथ संस्थानों को आवश्यक संसाधन मुहैया कराने होंगे। इसके अलावा, उच्च शिक्षा प्राप्त करने के इच्छुक छात्रों को कम ब्याज दर पर आवश्यक शैक्षिक ऋण भी उपलब्ध कराना होगा। ❑

संविधान का चिंतन भाग-1

संविधान की आत्मा को पहचानें

❑ साकेन्द्र प्रताप वर्मा

जिस प्रकार से देश का संविधान मौन रूप में हिन्दुत्व की अभिव्यक्ति करता है उसी प्रकार अन्य संवैधानिक संस्थायें भी इसी रूप को प्रकट करती हैं। संविधान की पालक और रक्षक देश की संसद होती है, उसकी दीवारों पर लिखे श्लोक या वाक्य भारत की इसी हिन्दू सांस्कृतिक पहचान को प्रस्तुत करते हैं, भले ही आज की संसद का व्यवहार उसके अनुरूप पूर्णतया न दिखाई देता हो। द्वार सं. एक पर संस्कृत का जो श्लोक लिखा है उसका हिन्दी अनुवाद है 'लोगों की भलाई और ईश्वर के मार्ग को दिखाने के लिये फाटक खोल दो।'

संविधान सभा द्वारा 26 नवम्बर 1949 को अंगीकृत, अधिनियमित और आत्मार्पित संविधान के मूल आलेख में दर्शाये गये चित्र तथा उसी आधार पर निश्चित किये गये संवैधानिक संस्थाओं के ध्येय वाक्य भारत की आत्मा है। इस आत्मा को संविधान निर्माताओं ने पहचान कर हमारे सन्मुख प्रेरक तत्व के रूप में प्रस्तुत कर दिया । अब हम तय करें कि स्वतंत्र भारत में उस आत्मा को रक्षित कर पाते हैं या फिर केवल बाह्य स्वरूप को संवारने में जुटे हैं। वैसे तो भारत की संस्कृति में सर्व दूर जानकारी है कि आत्माविहीन शरीर मृत ही होता है। कितना ही संवारे जीवित नहीं, हो सकता। हमको यह भी स्मरण रखना चाहिए कि इस संविधान को देश ने 26 जनवरी 1950, गणंतत्र दिवस से इसलिये लागू किया है क्योंकि 26 जनवरी 1930 को रावी तट पर देश ने समग्र स्वाधीनता का संकल्प लिया था। इसका भी विशेष अर्थ है । यह भी आत्मा का अंश है।

जिस प्रकार कोई मनुष्य दो भागों में बँटा होता है, जिसका एक भाग उसकी अदृश्य आत्मा के रूप में होता है तथा दूसरा भाग उसके दृश्यमान शरीर के रूप में होता है। उसी प्रकार किसी भी देश की आत्मा संविधान में वर्णित सांस्कृतिक पहचान में बसती है जबकि देश का शरीर वहाँ के संविधान में वर्णित आम-नागरिकों के हितों में निहित होता है। वस्तुत: भारत का संविधान हमारी आत्मारूपी जिस सांस्कृतिक पहचान को प्रकट करता है उसे नष्ट करने के घृणित प्रयास बहुत तेजी से चल रहे हैं। इतना ही नहीं आज की परिस्थिति में संविधान हमारी मानवीय आवश्यकताओं को भी पूरा करने में सक्षम नहीं दिखाई देता है। इसीलिए आजादी के बाद बीते वर्षों में संविधान को लगभग सौ बार हमने संशोधित कर डाला, फिर भी आत्म संतुष्टि नहीं मिल पायी। यहाँ एक प्रश्न उठता है कि क्या संविधान वास्तव में हमारी समस्त भावनाओं का आदर नहीं कर पा रहा है?

स्वाभाविक रूप से हम कह सकते हैं कि जब तक आत्मा और शरीर दोनों संतुष्ट नहीं होंगे, तब तक देश का आम आदमी संतुष्ट नहीं हो सकता।

यही रहे कि सांस्कृतिक रूप से भारत की आत्मा को अपने संविधान में व्यापक ढंग से प्रस्तुत करने का प्रयत्न संविधान निर्मात्री सभा ने किया है, जिसके अनुसार आधुनिक भारत के इतिहास को क्रमशः मोहन जोदड़ो युग, वैदिक या महाकाव्ययुग, महाजनपद या नन्द युग, मौर्य युग, गुप्त युग, मध्यकालीन युग, मुस्लिम युग, ब्रिटिश युग, भारत का स्वतंत्रता आंदोलन एवं क्रांतिकारी आंदोलन युग आदि में विभक्त किया है। इस ऐतिहासिक विभाजन का सबसे महत्त्वपूर्ण पहलू यह है कि गुप्त युग की समाप्ति में मुस्लिम शासकों के आगमन तक पूरे कालखण्ड को मध्यकालीन युग माना गया है और इस युग को प्रदर्शित करने के लिये जिन दृश्यों के चित्र संविधान में प्रस्तुत किये गये उसके आधार पर मुस्लिम युग के पहले का सम्पूर्ण इतिहास एक साथ मिलकर हिन्दू युग के रूप में देखा जा सकता है। लेकिन संविधान में किसी भी काल विशेष के लिये हिन्दू युग शब्द का प्रयोग नहीं किया गया, क्योंकि भारत का कोई भी शासक किसी धर्म (पंथ) विशेष का प्रतिनिधि कभी भी नहीं माना गया। यहाँ तक कि सम्राट अशोक को भी बौद्ध धर्म का प्रतिनिधि शासक नहीं माना गया। संविधान निर्माताओं ने भी हिन्दू सभ्यता की इसी स्वाभाविक धर्म निरपेक्षता को चित्रांकित किया है, भले ही उसके लिये अलग से शाब्दिक प्रयोग को भी बदले रूप में स्थान देने का दबाव बनाया गया है। आजाद भारत आज कैसे दुर्भाग्य से ग्रसित है कि -भारत में धर्म निरपेक्षता का अर्थ हिन्दू सभ्यता को भुलाने, हिन्दुत्व को अपमानित करने और देश के सांस्कृतिक आवरण पर पश्चिमी चोला पहनाने तक सीमित हो गया है। संभवतः ऐसा प्रयास करने वाले यह भूल जाते हैं कि इसकी प्रतिक्रिया भारत के मूल स्वभाव को ही बदल देगी, जो हिन्दू संस्कृति में पंथ निरपेक्षता के स्वाभाविक चरित्र को प्रस्तुत करती हैं। हमें ध्यान रखना होगा कि हिन्दुत्व की अवधारणा में ही सेकुलरिज्म समाहित है तथा हिन्दू बहुमत ही सेकुलरिज्म की गारण्टी है अन्यथा मुस्लिम बहुमत तो केवल और केवल इस्लामीकरण की राह है। जिसे हम भारत की धरती से ही कटे हुये दो अंगों बांग्लादेश और पाकिस्तान के रूप में देख सकते हैं । वैसे तो देश के संविधान में भारतीयता को प्रकट करने के लिये 22 चित्रों का सहारा लिया गया है, जिन्हें देखकर समझा जा सकता है कि इनका प्रयोग केवल संविधान की सजावट के लिये नहीं किया गया है बल्कि हिन्दू विरासत की छाप वर्तमान भारत पर डालने के लिये इनका प्रयोग किया गया है। मुस्लिम युग से पहले के जो चित्र बनाये गये हैं उनमें मोहन-जोदड़ो की मुहर, वैदिक आश्रम (गुरुकुल), राक्षसी लंका पर श्री राम की विजय और सीता माता की वापसी, अर्जुन को गीता का उपदेश देते हुये भगवान श्रीकृष्ण, उपदेश देते हुए भगवान बुद्ध, भगवान महावीर का जीवन दृश्य तथा भारत और विदेशों में धर्मोपदेश के दृश्य, बल-बुद्धि -विद्या के प्रतीक और प्रभु श्रीराम के अनन्य सेवक हनुमान जी, न्याय के प्रतीक महाराजा विक्रमादित्य का दरबार, नालन्दा विश्वविद्यालय की सील, उड़ीसा के मंदिरों की स्थापत्य कला, नटराज की मूर्ति तथा गंगावतरण के दृश्य सम्बन्धी चित्र भारत की उस सांस्कृतिक विरासत को प्रकट करते हैं। जिसकी दृढ़ आधार शिला केवल हिन्दुत्व पर ही टिकी है। लेकिन देश का कैसा दुर्भाग्य है कि जो चित्र जनमानस को प्रेरणा देने के लिये संविधान में बनाये गये उनके अस्तित्व पर ही प्रश्न चिह्न खड़ा करने की कोशिशें आजाद भारत में की जाने लगी। राम और कृष्ण काल्पनिक हैं, ऐसा बोलने वाले कुछ स्वार्थी तत्व नेताओं और तथाकथित बुद्धिजीवियों के रूप में खड़े हो गये और संविधान के रक्षक मूकदर्शक बन गये।

यहाँ विशेष रूप से उल्लेखनीय पहलू यह है कि मुस्लिम युग को प्रकट करने के लिये अकबर, शिवाजी और गुरुगोविन्द सिंह के चित्रों का ही चयन किया गया है। जिसमें शिवाजी और गुरुगोविन्द सिंह तो वे महान व्यक्ति हैं जिन्होंने अकबर के वंशजों की इस्लामिक क्रूरता और कट्टरता का तलवार से मुकाबला किया था। यहाँ तक कि गुरु गोविन्द सिंह की महाराज के पूज्य पिता और चारों पुत्रों का हिन्दू धर्म की रक्षा के लिये बलिदान हुआ था तथा छत्रपति शिवाजी ने हिन्दवी स्वराज की स्थापना की थी। मुगल शासक अकबर के चित्र को संविधान में इसलिये स्थान मिल गया क्योंकि वह अन्य मुगल बादशाहों की तुलना में कम क्रूर था तथा हिन्दू मतावलम्बियों का अपने हितों के लिये प्रयोग करता रहता था। मुहम्मद गौरी, महमूद गजनवी, बाबर, शाहजहाँ और क्रूरतम मुगल बादशाह औरंगजेब को किसी ने पसंद नहीं किया क्योंकि ये सभी आक्रमणकारी वृत्ति और भारत की सांस्कृतिक पहचान रूपी मंदिरों का विध्वंस करने वालों में अग्रणी थे।

अगर आज की तरह के कुछ नेता संविधान निर्मात्री सभा में होते तो अकबर भले ही रह जाता बाबर और

औरंगजेब जैसे कतई न छूटते। बाबरी मस्जिद का चित्र संविधान के मुख पृष्ठ पर छपवाने की वकालत करने के लिये अनेक स्वयंसिद्ध देशभक्त अवश्य खड़े हो जाते। ब्रिटिश युग और भारत के स्वतंत्रता आंदोलन को दर्शाने के लिये जिन चित्रों का सहारा लिया गया है वे भी कम अद्भुत नहीं हैं। जहाँ एक ओर आजादी के प्रखर योद्धा के रूप में अपने रक्त से इस भारत भूमि को सींचने वाले टीपू सुल्तान, रानी लक्ष्मीबाई और नेताजी सुभाष चन्द्र बोस के चित्र छापे गये हैं। वहीं दूसरी ओर अहिंसा के मार्ग पर चलकर आजादी का आंदोलन चलाने वाले महात्मा गाँधी को भी चिन्हित किया गया है। ध्यान रहे कि गाँधी जी भी वे व्यक्तित्व थे जिनकी कल्पना का स्वराज्य रामराज्य के रूप में था। उनका गहरा जुड़ाव हिन्दू जीवन मूल्यों के साथ रहा था, जिसका उल्लेख हिन्द स्वराज में देखा जा सकता है। वस्तुत: हिन्द स्वराज गाँधी जी के राष्ट्रीय चरित्र को प्रकट करने वाली प्रमुख पुस्तक है।

जिस प्रकार से देश का संविधान मौन रूप में हिन्दुत्व की अभिव्यक्ति करता है उसी प्रकार अन्य संवैधानिक संस्थायें भी इसी रूप को प्रकट करती हैं। संविधान की पालक और रक्षक देश की संसद होती है, उसकी दीवारों पर लिखे श्लोक या वाक्य भारत की इसी हिन्दू सांस्कृतिक पहचान को प्रस्तुत करते हैं, भले ही आज की संसद का व्यवहार उसके अनुरूप पूर्णतया न दिखाई देता हो। द्वार सं. एक पर संस्कृत का जो श्लोक लिखा है उसका हिन्दी अनुवाद है 'लोगों की भलाई और ईश्वर के मार्ग को दिखाने के लिये फाटक खोल दो।' केन्द्रीय कक्ष के द्वार पर लिखा है 'अयं निज: परोवेति गणना लघुचेतसाम्, उदारचरितानामतु वसुधैव कुटुम्बकम्'। लिफ्ट सं. एक के निकट के गुम्बद पर लिखा है कि 'वह कोई सभा सभा नहीं है जिसमें बुजुर्ग न हों, वह बुजुर्ग बुजुर्ग नहीं है जो धर्म के अनुसार न बोलता है, सत्य के बिना कोई धर्म जीवित नहीं रहता है, प्रत्येक सत्य को आवश्यक रूप से चतुराई और धोखेबाजी से दूर रहना चाहिए।' इसी प्रकार लिफ्ट सं. 2 के निकट गुम्बद पर लिखा गया श्लोक तो बहुत ही गम्भीर शिक्षात्मक संदेश देता है उसके अनुवाद में कहा गया है कि 'या तो सभा में प्रवेश मत करो या फिर सभा में उपस्थित रहकर धर्म के अनुसार ही बोलो। जो नहीं बोलते हैं या असत्य और अधार्मिक बोलते हैं, वे पाप के भागीदार बनते हैं।' इन सभी के साथ ही संसद के केन्द्रीय कक्ष में अध्यक्ष पीठ पर 'धर्म चक्र प्रवर्तनाय' लिखा गया है। ये समस्त ध्येयवाक्य भारतीय संसद का मौन मार्गदर्शन करते हैं, भले ही आज इनकी अनदेखी करके लोग अपने को अधिकाधिक सेकुलर प्रमाणित करने की होड़ में जुटे हुये दिखाई देते हैं।

हमारी आत्मा की यह पहचान संविधान और संसद तक ही सीमित नहीं है। भारत के राष्ट्रध्वज पर भी धर्म चक्र अंकित है। भारत सरकार-सत्यमेव जयते, सर्वोच्च न्यायालय-यतोधर्मस्ततोजय:, दूरदर्शन-सत्यम् शिवम् सुन्दरम्, ऑल इण्डिया रेडियो-बहुजन हिताय, थल सेना-सेवा अस्माकं धर्म:, नौ सेना-शं नो वरुण:, नभसेना नभ: स्पर्शम् दीप्तम् जैसे उन ध्येय वाक्यों को नित्य प्रयोग करते हैं जो भारत की हिन्दू सांस्कृतिक पहचान को प्रकट करते हैं। लेकिन भारत की इस आत्मा रूपी पहचान को आज चतुर्दिक आक्रमणों से लहूलुहान करने के प्रयास हो रहे हैं। वस्तुत: समाज केवल उन किताबों से नहीं चल सकता जो भावना प्रधान नहीं हैं, इसी कारण भारत के संविधान में कुछ भावनाओं का समावेश किया गया, किन्तु हमने उनकी अनदेखी करने में अधिक समय नहीं बीतने दिया, इसीलिये देश का संविधान जनता को उसका प्रतिबिम्ब नहीं दिखा सका। आजादी प्राप्त करने का उतावलापन और अंग्रेजों की चालबाजी का परिणाम आज तक हमें भोगना पड़ रहा है वह चाहे व्यवस्था के रूप में हो या संविधान के रूप में। 18 फरवरी 1946 को भारतीय वायुसेवा में विद्रोह के बाद अंग्रेजों को लगने लगा कि अब इस देश में बन्दूक के बल पर शासन करना संभव नहीं है। इसलिये शासन की बागडोर भले ही भारतीयों को सौंप दो लेकिन भविष्य में वाणी, विचार और व्यवहार पर हमारा ही अधिकार बना रहे। इस बात को ध्यान में रखकर भारत में ऐसे नेतृत्व की खोज शुरू की गयी जो अंग्रेजों, मुस्लिम लीग, साम्यवादियों और गाँधी जी को प्रिय हो। इसके लिये अंग्रेजी गुप्तचर संस्था ने जवाहर लाल नेहरू का नाम ब्रिटिश प्रधानमंत्री एटली को सुझाया। क्योंकि नेहरू जी मानसिक रूप से अंग्रेजियत के विरोधी नहीं थे। नेहरू जी को तैयार करने के लिये माउन्टबेटेन को भारत लाया गया, उसकी पत्नी एडविना माउन्टबेटेन एक बिगड़ैल रईसजादी थी। जो नये-नये लोगों को अपनी ओर आकर्षित करने में माहिर थी। इसी आकर्षण का शिकार बने पं. नेहरू और पं. नेहरू का शिकार बना आज का भारत। आजादी प्राप्ति के बाद लोगों ने सोचा था व्यवस्था में कुछ परिवर्तन होगा, कुछ अच्छे लोगों ने संविधान में भारत की आत्मा भी प्रविष्ट की थी। लेकिन सत्ता तो बदली व्यवस्था नहीं, वैसे व्यवस्था परिवर्तन थोड़ा कठिन भी है। स्वतंत्र भारत में जेपी आंदोलन

का मुख्य नारा व्यवस्था परिवर्तन था लेकिन व्यवस्था परिवर्तन बहुत आंशिक और अल्पकालिक हुआ। वी.पी.सिंह ने भ्रष्टाचार के विरुद्ध देश को जगा दिया किन्तु सत्ता प्राप्ति के बाद वी.पी. सिंह व्यवस्था परिवर्तन नहीं कर पाये। वस्तुत: अपना संविधान स्वतंत्रता सेनानियों की मूलभावनाओं के अनुरूप नहीं बना रह पाया, हम लक्ष्य से भटक गये, क्योंकि यह सब हमें जल्दबाजी में मिला था।

इंग्लैण्ड में 1215 ई. में ऐतिहासिक घटना हुई जिसे मैग्नाचार्टा कहा गया। उससे पहले राजा सर्वशक्तिमान था, छोटी सी किंग्स कौंसिल थी, जिसे किंग जॉन ने मैग्नाचार्टा पर हस्ताक्षर करके विस्तारित किया। जिसे पार्लियामेण्ट कहा गया। इस घटना के सात सौ वर्ष बाद प्रौढ़ों को और महिलाओं को मताधिकार 1918 ई. में मिला, इस संघर्ष में लोक शिक्षा भी मिली। हमारे यहाँ 1920 ई. में संसदीय पद्धति आयी कौंसिल ऑफ स्टेट्स के लिये सत्रह हजार लोगों को तथा नेशनल एसेम्बली के लिये नौ लाख को नौ हजार लोगों को अर्थात 24 करोड़ में से कुछ 9 लाख 26 हजार को मताधिकार मिला। किन्तु अचानक 1950 में सभी को मताधिकार, चुनाव लड़ने का अधिकार मिला जबकि इस दौरान लोक शिक्षा और लोक संस्कार मिले नहीं। इसी कारण जो-जो हमने बनाया वह जनता की कसौटी पर खरा नहीं उतरा यहाँ तक कि संविधान प्रारूप समिति के अध्यक्ष डॉ. भीमराव अम्बेडकर ने भी अपनी व्यथा राज्यसभा में 1953 में ही व्यक्त कर दी। जरुरत इस बात की है कि भारत की आत्मा का संविधान में रक्षण किया जाये, अन्यथा इस देश को पुन: मरने के कगार पर जाने से कोई नहीं रोक सकता। ❑

(स्वतंत्र लेखक, स्तंभकार)

ऐसे थे ए. पी. जे. अब्दुल कलाम

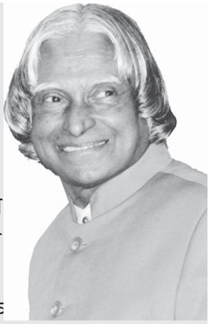

सपने वो नहीं होते जो रात को सोने पर आते हैं, सपने वो होते हैं जो रातों में सोने नहीं देते। ऐसे दमदार विचार रखने वाले भारत के पूर्व राष्ट्रपति डॉ. ए.पी.जे. अब्दुल कलाम इस दुनिया में नहीं रहे लेकिन वो लोगों के दिलों में हमेशा जीवित रहेंगे। ए.पी अब्दुल कलाम के विषय में इन पृष्ठों पर कई बार छापा जा चुका मगर उन्हें दोहरना लाभप्रद मान कुछ प्रमुख बातें पुन: प्रस्तुत है-

डॉ.ए.पी.जे. अब्दुल कलाम का जन्म 15 अक्टूबर 1931 व दक्षिण भारतीय राज्य तमिलनाडु के रामेश्वरम में हुआ। ए.पी.जे. अब्दुल कलाम का पूरा नाम अवुल पाकिर जैनुलब्दीन अब्दुल कलाम है। पेशे से नाविक कलाम के पिता ज्यादा पढ़े लिखे नहीं थे। ये मछुआरों को नाव किराये पर दिया करते थे। पाँच भाई और पांच बहनों वाले परिवार को चलाने के लिए पिता के पैसे कम पड़ जाते थे। कलाम जब 8 साल के थे, तब से सुबह 4 बजे उठते थे और स्नान करने के बाद गणित पढ़ने चले जाते थे। उनके अध्यापक स्वामीयर की यह विशेषता थी कि जो विद्यार्थी स्नान करके नहीं आता था, वह उसे नहीं पढ़ाते थे। वे कलाम के साथ साथ पाँच और विद्यार्थियों को प्रतिवर्ष नि:शुल्क ट्यूशन पढ़ाते थे। लिहाजा, तभी से डॉक्टर कलाम को सुबह उठने की आदत थी। देश के पूर्व राष्ट्रपति रह चुके डॉक्टर अब्दुल कलाम बचपन में 'अखबार' भी बांटा करते थे। दरअसल, वे अपने पिता की आर्थिक तौर पर मदद करना चाहते थे, जिसके लिए वे स्कूल से आने के बाद अखबार बाँटने निकल जाया करते थे। 1992 से 1999 तक कलाम रक्षा मंत्री के रक्षा सलाहकार भी रहे। इस दौरान वाजपेयी सरकार ने पोखरण में दूसरी बार न्यूक्लियर टेस्ट भी किए और भारत परमाणु हथियार बनाने वाले देशों में शामिल हो गया।

डॉ. कलाम को वर्ष 1997 में भारत रत्न सम्मान से नवाजा गया। आपको बता दें, डॉ. सर्वपल्ली राधाकृष्णन और डॉ जाकिर हुसैन के बाद कलाम ही एक ऐसे व्यक्ति हैं, जिन्होंने भारत रत्न मिलने के बाद राष्ट्रपति का पद संभाला। राष्ट्रपति के. आर. नारायण के हाथों इन्हें भारत रत्न सम्मान प्राप्त हुआ था। डॉ. कलाम को 'पीपुल्स प्रेसिडेंट' भी कहा जाता है। क्योंकि वे आम लोगों से काफी नजदीकी रिश्ता बनाकर रखते थे। डॉक्टर कलाम ने एक बार कहा था कि किताबें उनकी प्रिय मित्र हैं। और उनके घर में लाइब्रेरी है, जिसमें हजारों पुस्तकें हैं। वे किताबें उनकी सबसे बड़ी संपदा है। डॉक्टर कलाम युवाओं और बच्चों के बीच खासे लोकप्रिय रहे। यह उनकी लोकप्रियता का ही आलम था कि साल 2003 और 2006 में उन्हें एमीवी ने बतौर यूथ ऑइकन ऑफदि ईयर नॉमिनेट किया था। एक इंटरव्यू के दौरान डॉक्टर कलाम ने कहा था, कि संगीत और नृत्य एक ऐसा साधन है, जिसके जरिए हम वैश्विक शांति सुनिश्चित कर सकते हैं। कला में पूरे विश्व को साथ लाने की ताकत है। डॉक्टर कलाम को संगीत से खासा लगाव रहा। इन्हें 'मिसाइल मैन' के नाम से भी संबोधित किया जाता है। डॉक्टर अब्दुल कलाम को प्रोजेक्ट डायरेक्टर के रूप में भारत का पहला स्वदेशी उपग्रह एसएलवी-3 प्रक्षेपास्त्र बनाने का श्रेय हासिल है। भारत के राष्ट्रपति डॉ. अब्दुल कलाम 26 मई 2006 को जब स्विट्ज़रलैंड की यात्रा पर वहाँ पहुँचे, तो स्विट्ज़रलैंड सरकार ने उस दिन को 'विज्ञान दिवस' घोषित किया, जो डॉ. आज़ाद को समर्पित है। एक कार्यक्रम को संबोधित करते हुए पूर्व राष्ट्रपति एपीजे अब्दुल कलाम ने जीवन के सबसे बड़े अफसोस का जिक्र किया था उन्होंने कहा था कि वह अपने माता पिता को उनके जीवनकाल में 24 घंटे बिजली उपलब्ध नहीं करा सके। 27 जुलाई 2015 को दिल का दौरा पड़ने से इस महान व्यक्ति का निधन हो गया। कमाल के थे कलाम साहब। एक बेहद गरीब परिवार से होने के बावजूद अपनी मेहनत और समर्पण के बल पर बड़े से बड़े सपनों को साकार करने का एक जीता-जागता प्रमाण हैं। सचमुच ए.पी.जे. अब्दुल कलाम जैसा व्यक्तित्व का इस धरती पर जन्म लेना भारत के लिए गौरव की बात हैं।❑

अ.भा. राष्ट्रीय शैक्षिक महासंघ

राष्ट्रीय साधारण सभा में 25 सितम्बर 2016 को डोल आश्रम, अल्मोडा में पारित प्रस्ताव

प्रस्ताव-1

राष्ट्र केन्द्रित शिक्षा-नीति का निर्माण एवं कार्यान्वयन सुनिश्चित किया जाए

भारत के अब तक प्रसूत सभी शिक्षा-प्रकल्पों में इस तथ्य को ठीक तरह से उभारा गया है कि शिक्षा किसी भी देश की सामाजिक और सांस्कृतिक विरासत के संरक्षण और संवर्द्धन तथा राष्ट्र के समग्र विकास का आधार होती है। 1948-49 के विश्वविद्यालय शिक्षा आयोग, 1952-53 के माध्यमिक शिक्षा आयोग, 1953 के विश्वविद्यालय अनुदान आयोग अधिनियम जो 1985 में संशोधित हुआ, 1964-66 के शिक्षा आयोग, 1968 की राष्ट्रीय शिक्षा-नीति और 1986 की नई शिक्षा-नीति में नई पीढ़ी को संस्कार की दृष्टि से श्रेष्ठ और आजीविका की दृष्टि से सक्षम बनाने के लिए अत्यन्त महत्त्वाकांक्षी कार्य-योजनाएँ तैयार की गईं। देश में शिक्षा की नई नीति बनाई जा रही है। यह 1986 की शिक्षा नीति का स्थान लेगी। समाज तेजी से बदल रहा है, ऐसे में समय के साथ शिक्षा-नीति की समीक्षा तथा उसका पुनर्लेखन आवश्यक है। नई शिक्षा-नीति निर्माण के समय इस बात पर भी विचार किया जाना चाहिए कि क्या पूर्ववर्ती नीति को पूरी तरह लागू किया गया या नहीं ? जिन प्रावधानों को लागू नहीं किया जा सका तो क्या कारण रहे। आज यदि मूल्यांकन करें तो 1986 की शिक्षा-नीति को अभी तक लागू नहीं किया जा सका है। ऐसी शिक्षा-नीति बनाने का कोई अर्थ नहीं, जिसे लागू नहीं किया जा सके। इससे लाभ के स्थान पर हानि की संभावना रहती है।

शिक्षा को लेकर अब तक हुई प्रगति को देखते हुए लगता है कि कार्यान्वयन के स्तर पर देश कमोबेश वहीं खड़ा है, जहाँ वह पहले खड़ा था। शिक्षा पर देश की सकल घरेलू आय (जीडीपी) का न्यूनतम दस प्रतिशत व्यय होना चाहिए, लेकिन सरकार उससे बहुत पीछे हैं। शिक्षा जैसे महत्त्वपूर्ण क्षेत्र के लिए पर्याप्त आर्थिक संसाधन न जुटाना नीति के कार्यान्वयन के स्तर पर यह एक आधारभूत विसंगति है।

शिक्षा एक ऐसे राष्ट्रीय पाठ्यक्रम-ढाँचे पर आधारित होनी चाहिए, जिसके अन्तर्गत राष्ट्रीय अस्मिता और गौरव को जगाने वाले विषय व्यापक स्तर पर सम्मिलित किए जाएँ, लेकिन इस दिशा में अब तक उल्लिखित करने वाला कोई भी कार्य नहीं हुआ है। अनेक आधारभूत विषयों, जैसे एक समान स्कूल प्रणाली लागू करने, स्कूल पाठ्यक्रम में सांस्कृतिक शिक्षा को सम्मिलित करने, एक समान माध्यमिक शिक्षा लागू करने, उच्च शिक्षा संस्थानों को स्वायत्तता देने, सरकार-संचालित प्रणाली के बाहर चल रहे स्कूलों के लिए पाठ्य-सामग्री की नियामक व्यवस्था करने आदि पर प्रगति अपेक्षित है।

बच्चों के बस्ते का बोझ कम करना और उन्हें विद्यालयों में उन्मुक्त वातावरण देना सुनिश्चित करने के स्थान पर देश के बच्चों पर पुस्तकों और उत्तर-पुस्तिकाओं का भार बढ़ता ही जा रहा है। बस्ता-मुक्त शिक्षा के कार्य को एक अभियान की तरह लिया जाना था, लेकिन केंद्र व राज्य सरकारों की कार्य-विधि में एकरूपता न होने के कारण ऐसा हो नहीं पाया है। नई शिक्षा-नीति में ऐसे लचीले पाठ्यक्रमों का समावेश किया जावे जिससे हर प्रकार के विद्यार्थी को उसकी क्षमता के अनुसार आगे बढ़ाया जा सके। बच्चे को केवल नौकरी के लिए नहीं अपितु समाज के लिए तैयार किया जा सके। विषयों को सीखना जितना सुगम मातृभाषा में होता है, उतना अन्य भाषाओं में नहीं होता। प्राथमिक और माध्यमिक शिक्षा के साथ-साथ उच्च और तकनीकी शिक्षा में भी मातृभाषा को प्रोत्साहन देने के संबंध में सरकार द्वारा अब तक कोई बड़ी कार्रवाई नहीं की गई है।

पड़ौस के स्कूल की अवधारणा को साकार करने के गम्भीर प्रयास किए जावें। प्रत्येक मुहल्ले में बच्चों के खेलने हेतु निःशुल्क, समुचित व सामुहिक व्यवस्था स्थानीय प्रशासन द्वारा अनिवार्यतः की जावे। खेती, पशुपालन और अन्य समस्थिति उद्यमों से सम्बद्ध विषय पाठ्यक्रम के अंतर्गत प्राथमिकता से सम्मिलित किए जाने चाहिए, लेकिन स्वतन्त्रता के बाद से अभी तक व्यावहारिक शिक्षा से जुड़े इस कार्य में कोई उल्लेखनीय प्रगति नहीं हुई है।

शिक्षा-व्यवस्था में राजनैतिक हस्तक्षेप एक बहुत बड़ा दोष है। कहा गया था कि शिक्षा का क्षेत्र चरित्र-निर्माण का क्षेत्र है, लेकिन राजनीति के क्षेत्र में काम कर रहे लोग युवाओं का अपने स्वार्थ के लिए इस्तेमाल करने का कोई अवसर नहीं चूकते हैं। शिक्षा-व्यवस्था राजनीति से मुक्त और पूर्णतया आत्मनिर्भर होनी चाहिए। इस उद्देश्य की सिद्धि की दिशा में कार्यान्वयन के स्तर पर बहुत बड़ी दुर्बलता सामने आई है। इस हेतु एक राष्ट्रीय शिक्षा नियामक आयोग की स्थापना अविलंब की जानी चाहिए। पाठ्यक्रमों में आज भी हमारी सभ्यता

और संस्कृति के गौरव को दर्शाने वाला इतिहास प्राथमिकता के स्तर पर शामिल नहीं है। देश की सभ्यता और संस्कृति के गौरव को उभारने वाले शिक्षा-कार्यक्रमों की रचना वर्तमान की महत्ती आवश्यकता है।

अखिल भारतीय राष्ट्रीय शैक्षिक महासंघ की साधारण सभा शासन से यह माँग करती है कि व्यापक राष्ट्रीय हित में भारतीय सभ्यता और संस्कृति में निहित शाश्वत जीवन-मूल्यों की प्रतिष्ठापना करके आजीविकाक्षम युवा तैयार करने का संकल्प हमारी शिक्षा-नीति में प्रकट हो तथा उसे पूरा करने के लिए कार्यान्वयन के स्तर पर तंत्र को सक्रिय करने के गंभीर प्रयास किए जायें।

महासंघ की साधारण सभा यह भी माँग करती है कि शिक्षा में वास्तविक, किंतु व्यावहारिक एकरूपता लाने, प्रौढ़-शिक्षा जैसे युगप्रवर्तनकारी कार्यक्रम को जनांदोलन बनाने, समाज के सभी वर्गों के बच्चों को शिक्षा सुलभ कराने, बुनियादी अर्थात् प्राथमिक शिक्षा की गुणवत्ता बनाए रखने, बालिका शिक्षा पर विशेष ध्यान देने, देश के अधिकाधिक स्थलों पर आधुनिक विद्यालयों की स्थापना करने, माध्यमिक शिक्षा को देश के स्तर पर समान और कौशलपरक बनाने, उच्च-शिक्षा को स्वायत्त बनाकर उसका पूरा प्रबंधन शिक्षकों के हाथ में देने, उच्च-शिक्षा में अंतरानुशासनिक अनुसंधानों को प्रोत्साहित करने, नए विश्वविद्यालयों की स्थापना करने, नियामक संस्थाओं को सुदृढ़ करने, खेल, शारीरिक शिक्षा व योग को बढ़ावा देने, शिक्षा के व्यावसायीकरण को रोकने तथा एक सक्षम मूल्यांकन-प्रक्रिया अपनाने आदि को नई शिक्षा-नीति में शामिल करने के संकल्प के साथ इसे कार्यान्वित करने के लिए शिथिलता न बरती जाए।

महासंघ की साधारण सभा का यह सुविचारित मत है कि शिक्षा में अधिकाधिक लोगों की भागीदारी सुनिश्चित करने के लिए एक विकेंद्रीकृत प्रबंधन-ढाँचे को धरातल पर लाकर मूर्त रूप दिया जाना भी बहुत जरूरी है। साधारण सभा का प्रस्ताव है कि उपरोक्त कार्यक्रमों को शामिल करते हुए नई शिक्षा-नीति के प्रावधानों की घोषणा के साथ ही उसकी क्रियान्विती के लिए आवश्यक वैधानिक एवं आर्थिक प्रावधान सुनिश्चित किए जावें।

प्रस्ताव-2

अभिव्यक्ति की स्वतन्त्रता की मर्यादा सुनिश्चित की जाए

भारत एक विविधताओं से भरपूर राष्ट्र है। यहाँ प्राकृतिक ही नहीं, वैचारिक वैविध्य भी सदा रहा है। नाना मत-पन्थ व विचारधाराओं का सह-अस्तित्व यहाँ प्राचीनकाल से ही रहा है। विभिन्न गम्भीर एवं विवादास्पद विषयों पर खुले शास्त्रार्थ की परम्परा की बात हो या ग्रन्थ लेखन में पूर्वपक्ष व उत्तरपक्ष के प्रतिपादन के साथ खण्डन-मण्डन की परम्परा की बात हो; यह सब हमारे मुक्त बौद्धिक विमर्श के उज्ज्वल स्मारक हैं। 'आ नो भद्रा कृतवो यन्तु विश्वत:' (Let the Nobel thoughts come from all the sides) की प्रार्थना करने वाले हम लोगों को चिन्तन व विचार-विनिमय में पूर्ण स्वातन्त्र सहज उपलब्ध रहा है। आधुनिक भारत में भी संविधान का अनुच्छेद 19 (1) अपने प्रत्येक नागरिक को भाषण व अभिव्यक्ति की स्वतन्त्रता देता है।

किन्तु विगत में अनेक घटनाओं ने यह सिद्ध किया है कि इस संविधान-प्रदत्त अधिकार की आड़ में अमर्यादित आचरण की दु:खद प्रवृत्ति बढ़ रही है। बात-बात में अभिव्यक्ति की आजादी और संविधान के अनुच्छेद 19 (1) की दुहाई देने वाले क्या यह नहीं जानते कि अभिव्यक्ति का यह अधिकार असीम नहीं बल्कि ससीम है और वही संविधान अपने अगले अनुच्छेद 19 (2) में इस मौलिक अधिकार पर उचित प्रतिबंध भी लगाता है। इसी संविधान के अनुच्छेद 51 (अ) में मौलिक कर्त्तव्यों का भी प्रावधान है।

पश्चिम में अभिव्यक्ति के एक बड़े पैरोकार जॉन स्टुअर्ट मिल ने कहा था कि अपनी छड़ी घुमाने की आपकी स्वतन्त्रता वहाँ समाप्त हो जाती है, जहाँ मेरी नाक शुरू होती है। हाल ही में कुछ शिक्षण-संस्थाओं और सार्वजनिक सभाओं में जिस प्रकार से खुलेआम देशद्रोहपूर्ण और देशभञ्जक मानसिकता वाली अभिव्यक्तियाँ हुई हैं तथा राजनैतिक गलियारों और कतिपय तथा कथित बुद्धिजीवियों की ओर से उस सबके समर्थन में जैसी प्रतिक्रियाएँ हुई हैं, वे खेदजनक हैं। इस प्रकार के अमर्यादित आचरण के लिए अभिव्यक्ति की आजादी को कवच के रूप में कदापि इस्तेमाल नहीं किया जा सकता।

इसी सन्दर्भ में अखिल भारतीय राष्ट्रीय शैक्षिक महासंघ यह सर्वसम्मत प्रस्ताव स्वीकार करता है कि अभिव्यक्ति की स्वतन्त्रता के नाम पर -

1. राष्ट्रीय एकता, अखण्डता व संप्रभुता के साथ खिलवाड़ अक्षम्य है।
2. धर्म, संस्कृति, सनातन परम्पराओं व मूल्यों का अवमूल्यन असह्य है।
3. राष्ट्रीय महापुरुषों, संस्थाओं, मानबिन्दुओं, प्रतीकों, राष्ट्रध्वज-राष्ट्रगान आदि की अवमानना अस्वीकार्य है।

अभिव्यक्ति के स्वातन्त्र का पूर्ण समर्थन करते हुए भी महासंघ का यह सुदृढ़ मत है कि इस स्वातन्त्र को भी एक लक्ष्मण रेखा से मर्यादित होना चाहिये।

प्रस्ताव-3

शिक्षा एवं शिक्षकों की समस्याओं का निराकरण किया जाए

अखिल भारतीय राष्ट्रीय शैक्षिक महासंघ की साधारण सभा केन्द्र एवं राज्य सरकारों से आग्रह करती है कि उनके स्तर पर हल करने योग्य शिक्षा एवं शिक्षकों की निम्न समस्याओं पर आवश्यक सकारात्मक कार्यवाही करें -

1. मध्यान्ह भोजन योजना को प्रभावी बनाने पर पुनर्विचार हो। इसे प्रभावी बनाने के लिए आवश्यक संसाधन जैसे पूर्ण सुविधा युक्त रसोईघर, शुद्ध पेयजल, बर्तन, डायनिंग हाल आदि उपलब्ध कराये जाएँ, बढ़ती मँहगाई और दाल सब्जी की आसमान छूती कीमतों के मुकाबले इसके संचालन हेतु उपलब्ध कराई जाने वाली राशि में भी वृद्धि की जाऐ और इस योजना से शिक्षकों को पूर्णतया मुक्त रखा जाए। इसका प्रबन्धन किसी स्वतंत्र एजेंसी से कराया जाए।
2. शिक्षकों को समस्त गैर शैक्षिक कार्यों यथा जनगणना, पशुगणना, आर्थिक गणना, बी.एल.ओ., भवन निर्माण आदि से मुक्त किया जाए।
3. शिक्षा की गुणवत्ता सुनिश्चित करने के लिए ठेका प्रथा यथा शिक्षा मित्र, संविदा शिक्षक, प्रबोधक, पैरा टीचर आदि नामों से की जाने वाली नियुक्तियों को तुरन्त समाप्त करते हुए स्थायी शिक्षकों की नियुक्ति की जाए। प्राथमिक, माध्यमिक एवं उच्च शिक्षा के सभी स्तरों पर शिक्षकों के रिक्त पड़े पदों को अविलम्ब स्थायी रूप से भरा जाए।
4. देश के भिन्न-भिन्न राज्यों में शिक्षकों के वेतनमान एवं सेवा शर्तों, कार्यभार में अनेक प्रकार की असमानताएँ एवं विसंगतियाँ है। समान कार्य के लिए समान वेतन के सिद्धान्त का पालन करते हुए सम्पूर्ण देश में सभी स्तरों पर शिक्षकों के लिए समान वेतनमान नीति एवं समान सेवा शर्तें लागू की जाए। 7वें वेतनमान को देशभर में एक समान लागू किया जाय।
5. शिक्षा की गुणवत्ता बनाए रखने के लिए शिक्षकों की नियमित भर्ती करने को सुनिश्चित किया जाए तथा ऐसा न करने वालों के खिलाफ कठोर कदम उठाए जाऐं।
6. नवीन यूजीसी वेतन समीक्षा समिति का देर से ही सही, पर अंततः गठन करने का महासंघ स्वागत करता है तथा साथ ही अपेक्षा करता है कि पिछले वेतनमान की विसंगतियाँ दूर हों। कई राज्यों ने यूजीसी रेगुलेशन के अनुरूप पदनाम, पीएच.डी. की प्रोत्साहन वृद्धियाँ, पूर्व सेवा का लाभ तथा रेग्युलेशन में वर्णित अन्य सुविधाओं को लागू नहीं किया है। योग्यतम व्यक्तियों को उच्च शिक्षा के क्षेत्र में आकर्षित करने के लिए एंट्रीपॉइंट पर उच्च वेतनमान, सम्पूर्ण सेवा काल में समयबद्ध न्यूनतम 4 प्रोन्नतियाँ, ए.पी.आई. सिस्टम को विवेकपूर्ण बनाने की व्यवस्था की जाए। विश्वविद्यालय अनुदान आयोग को सुनिश्चित करना चाहिए कि विश्वविद्यालय और कॉलेज शिक्षकों के लिए 7 वें वेतन समीक्षा समिति की सभी सिफारिशें समान रूप से भारत संघ के सभी राज्यों में लागू हों।
7. शिक्षा में गुणवत्ता सुधार के लिए उचित शिक्षक शिक्षार्थी अनुपात आवश्यक है। दुर्भाग्य से अधिकांश संस्थानों, सरकारों द्वारा इसका पालन नहीं किया गया है, कई स्थानों पर शिक्षक शिक्षार्थी अनुपात की गलत व्याख्या करने से ढ़ाँचा चरमरा गया है। शिक्षक-शिक्षार्थी अनुपात के प्रावधान अधिकतम सीमा को व्यक्त करते हैं, अतः प्राथमिक शिक्षा में जितनी कक्षाएँ उतने न्यूनतम शिक्षक, माध्यमिक शिक्षा में जितने विषय उतने न्यूनतम विषयाध्यापक तथा उच्च शिक्षा में उचित शिक्षक शिक्षार्थी अनुपात की व्यवस्था ही शिक्षार्थियों के सम्पूर्ण विकास को संभव बना सकती है।
8. शिक्षण संस्थाओं में शिक्षकों की कमी की स्थिति से निपटने, उनके अनुभव का लाभ उठाने एवं शिक्षा में कॅरियर को अधिक आकर्षक बनाने की दृष्टि से सम्पूर्ण देश में सभी स्तरों पर शिक्षकों की सेवानिवृत्ति आयु एक समान 65 वर्ष की जानी चाहिए।
9. एक जनवरी 2004 के पश्चात् नियुक्त शिक्षकों के लिए लागू पेंशन योजना को हटाकर पूर्व की पेंशन योजना लागू की जाए। नवीन पेंशन योजना शिक्षकों को आर्थिक, सामाजिक सुरक्षा प्रदान करने में असफल रही है तथा उसने शिक्षकों के मन में भविष्य के प्रति आशंकाओं को बढ़ाया है।
10. ज्ञान सृजन के लिए शिक्षा के सभी स्तरों पर शोध आवश्यक है। महासंघ की साधारण सभा आग्रह करती है कि शिक्षा, शिक्षक, शिक्षार्थी एवं राष्ट्र के व्यापक हित में प्राथमिक से लेकर उच्च शिक्षा तक के सभी स्तरों पर शोध हेतु सुदृढ़ व्यवस्थाएँ की जाए।

अखिल भारतीय राष्ट्रीय शैक्षिक महासंघ

राष्ट्रीय कार्यकारिणी व साधारण सभा बैठक सम्पन्न

अखिल भारतीय राष्ट्रीय शैक्षिक महासंघ की राष्ट्रीय कार्यकारिणी की एक बैठक महासंघ के अध्यक्ष डॉ. विमल प्रसाद अग्रवाल की अध्यक्षता में दिनांक 24 व 25 सितम्बर 2016 को कल्याणी देवस्थान, डोम आश्रम, जिला अल्मोड़ा, उत्तराखण्ड में संपन्न हुई। बैठक के उद्घाटन समारोह में कल्याणी देवस्थान, डोल आश्रम के स्वामी विश्वेश्वरानन्द जी मुख्य अतिथि एवं स्वामी शिवमुनि जी विशिष्ट अतिथि के रूप में पधारे। बैठक का संचालन कर रहे महासंघ के अतिरिक्त महामंत्री श्री के. बालकृष्ण भट्ट ने मुख्य अतिथि व विशिष्ट अतिथि पूजनीय स्वामी द्वय का परिचय कराया व स्वागत किया। अतिरिक्त महामंत्री ने राष्ट्रीय कार्यकारिणी के सदस्यों का स्वागत किया। माननीय अतिथियों के स्वागत सम्मान के पश्चात कार्यवाही प्रारम्भ हुई। स्वामी विश्वेश्वरानन्द जी ने अपने आर्शीवचन में सभी से समाज सेवा में सदैव सक्रिय बने रहने के आह्वान के साथ ही बैठक की सफलता का आशीर्वाद दिया। बैठक के प्रारम्भ में आगन्तुक सदस्यों का परिचय प्रस्तुत किया। परिचय के पश्चात, महासंघ से सम्बद्ध सभी संगठनों ने राष्ट्रीय कार्यकारिणी की गत बैठक के पश्चात् उनके संगठनों द्वारा संपन्न गतिविधियों का विवरण प्रस्तुत किया गया। बाद के सत्र में महासंघ के विभिन्न कार्यक्रमों के सम्पन्न होने की समीक्षा की गई जिसमें प्रत्येक संगठन ने गुरुवंदन कार्यक्रम सहित अन्य कार्यक्रमों का विवरण प्रस्तुत किया। समीक्षा में सम्पन्न कार्यक्रमों के विवरण को उत्साहजनक मानते हुये आह्वान किया कि इन कार्यक्रमों को व्यापक व गहन बनाने हेतु विशेष प्रयास किये जायें। शाश्वत जीवन मूल्य को जन-जन तक पहुँचाने के लक्ष्य के साथ शाश्वत जीवन मूल्यों पर खण्ड, ब्लॉक/ तहसील स्तर तक कार्यशाला आयोजित करने का मन्तव्य व्यक्त किया।

बैठक के प्रथम सत्र में महासंघ के अतिरिक्त महामंत्री श्री के. बालकृष्ण भट्ट ने गत बैठक का कार्यवाही विवरण प्रस्तुत किया जिसकी सदन ने पुष्टि की। कोषाध्यक्ष ने महासंघ का अंकेक्षित आय-व्यय का विवरण दिया, जिसे सदन से स्वीकार किया। महासंघ की साधारण सभा में प्रस्तुत किये जाने वाले तीन प्रस्तावों को प्रस्तुत किया तथा यथोचित विचार-विमर्श के उपरान्त इन्हें सर्व सम्मति से स्वीकार किया गया। जिसमें प्रथम, राष्ट्र केन्द्रित शिक्षा नीति का निर्माण एवं कार्यान्वयन सुनिश्चित करने, दूसरा, अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता की मर्यादा सुनिश्चित करने तथा तीसरा, शिक्षा एवं शिक्षकों की समस्याओं का निराकरण करने से संबंधित प्रस्ताव पारित किये गये। 24 सितम्बर को सायंकाल प्राथमिक, माध्यमिक व उच्च शिक्षा संवर्ग की समूहश: बैठक सम्पन्न हुई जिनमें संबंधित वर्ग की समस्याओं व उनके निवारण के उपाय तथा कार्यक्रमों पर विचार किया गया।

समापन सत्र से पूर्व के सत्र में विभिन्न संवर्गो की समूहश: बैठकों में सम्पन्न विचार-विमर्श का विवरण संबंधित संवर्ग के संयोजकों द्वारा प्रस्तुत किया गया। तत्पश्चात् राष्ट्रीय संगठन मंत्री श्री महेन्द्र कपूर ने महासंघ व विभिन्न संवर्गों के आगामी कार्यक्रमों की रूप रेखा प्रस्तुत की गई। राष्ट्रीय कार्यकारिणी के समारोप कार्यक्रम में अतिरिक्त महामंत्री ने बैठक में लगभग सभी राज्यों से आये 128 शिक्षक प्रतिनिधियों के भाग लेने की जानकारी दी।

25 सितम्बर को अखिल भारतीय राष्ट्रीय शैक्षिक महासंघ की साधारण सभा संपन्न हुई। साधारण सभा में गत साधारण सभा की कार्यवाही का अनुमोदन किया गया। सभा में अतिरिक्त महामंत्री व कोषाध्यक्ष ने क्रमश: महामंत्री का प्रतिवेदन व वर्ष भर का आय-व्यय विवरण प्रस्तुत किया जिसे सर्व सम्मति से स्वीकार किया गया। साधारण सभा ने राष्ट्रीय कार्यकारिणी द्वारा अनुमोदित प्रस्तावों पर विचार किया व कतिपय सुझावों के साथ पश्चात् सर्वस्वीकृति प्रदान की।

समारोप सत्र में सह संगठन मंत्री ने स्थानीय कार्यकर्ताओं का परिचय कराया। अतिरिक्त महामंत्री ने मुख्य व विशिष्ट अतिथि के प्रति आभार व्यक्त किया। इसके साथ ही अन्य सभी संबंधित व्यक्ति व संस्थाओं के प्रति आभार व्यक्त किया। अध्यक्षीय प्रबोधन में अध्यक्ष डॉ. विमल प्रसाद अग्रवाल ने संगठनों व कार्यकर्ताओं को कुछ विशिष्ट तथ्यों की ओर ध्यान आकर्षित कराते हुये, महासंघ के सभी कार्यक्रमों को सफल बनाने के लिये उत्साह के साथ जुटने का आह्वान किया।

गुजरात में उपेक्षा के शिकार शारीरिक शिक्षक

गुजरात राज्य में आरटीई 2009 में व्यायाम शिक्षकों को अंशकालिन शिक्षकों में खपाया जिसकी वजह से आज कक्षा 6 से 8 में एक भी पूर्णकालिन व्यायाम शिक्षक नहीं है जो शिक्षक प्राइमरी स्कूलों में काम करते हैं उन सभी को कक्षा 1 से 5 में भेज दिया गया। गुजरात में व्यायाम शिक्षा का कितना बुरा हाल किया गया वो जानिये।

1. 2010 के बाद गुजरात में एक भी व्यायाम शिक्षक की भरती नहीं हुई। व्यायाम विषय को 2010 से अभ्यासक्रम से निकाल दिया गया, वह पुनः शामिल हो।

2. गुजरात में प्राइमरी स्कूल में व्यायाम शिक्षक बनने के लिये जरूरी कोर्स सी.पी.एड. (सर्टीफिकेट ऑफ फिजिकल एज्युकेशन) और हाईस्कूल के शिक्षक बनने का कोर्स डी.पी.एड. (डिप्लोमा इन फिजिकल एज्यूकेशन) गुजरात सरकार ने 30 जून 2014 को प्रस्ताव क्रमांक टी.सी.एम. 14/2014/280782) कर दिया। सभी कॉलेजों को ताला लगा दिया, सभी व्यायाम कालेज पुनः चालु हों ये देश के लिये और समाज के लिये जरूरी है। सरकार स्पोर्टस युनिवर्सिटियाँ खोल रही है पर स्पोर्टस युनिवर्सिटी में जाकर बच्चा क्या करेगा जब उनको बास्केट बॉल पकड़ना ही नहीं आता वो बॉल पकड़ना सीखेगा या गेम पर ध्यान देगा?

3. आज गुजरात की सरकारी स्कूलों में कक्षा 6 से 8 में एक भी व्यायाम शिक्षक नहीं है जो व्यायाम शिक्षक थे उन सभी को कक्षा 1 से 5 में भेज दिया गया। जिनमें ज्यादातर शिक्षकों के पास उच्च डिग्रियाँ हैं फिर भी वो निम्न कक्षा में काम करने के लिये मजबूर हैं।

4. व्यायाम शिक्षक उच्च अभ्यास करके स्कूल में प्रिंसीपल भी नहीं बन सकते। वो एनटीटी, प्रिंसीपल बनने के लिये जरूरी है, को भी नहीं दे सकता।

5. 500 से ज्यादा व्यायाम शिक्षकों ने साथ मिलकर 1 साल पहले गुजरात के शिक्षणमंत्री श्री भूपेन्द्र सिंह जी को 1534 शिक्षक की एक लिस्ट सौंपी थी जो शिक्षक कक्षा 1 से 5 के बजाय कक्षा 6 से 8 में काम करना चाहते हैं वही वेतन मिलेगा उससे सरकार को कोई आर्थिक भार नहीं पड़ेगा। वो शिक्षक जो प्रशिक्षण में सीखे हैं वो बच्चों को सिखायेंगे पर गुजरात सरकार कहती है यह केन्द्र का प्रश्न है जब आरटीई 2009 में सुधार होगा तभी व्यायाम के इन प्रश्नों का समाधान होगा। व्यायाम विषय को अभ्यास क्रम में शामिल किया जाना चाहिये।

गुजरात में ज्यादातर प्राइमरी स्कूलें ग्राम्य विस्तार में हैं ग्राम्य विस्तार का बच्चा सशक्त और मजबूत होता है पर उसे मार्गदर्शन ना मिलने से उनमें कौशल का विकास नहीं होता वो स्पोर्ट्स युनिवर्सिटी कभी देख नहीं पाता और उनकी प्रतिभा को हम कभी नहीं पहचान पाते। उनको बाहर लाने का काम सिर्फ दूर दराज के इलाके में काम करता व्यायाम शिक्षक ही कर सकता है और व्यायाम जो सदियों पुराना है भारतीय संस्कृति का अभिन्न अंग है। पूरे विश्व में व्यायाम का अभ्यास क्रम और शिक्षक है उनको सबसे ज्यादा महत्त्व मिलता है इसलिये विश्व को जगाने वाले योग गुरु भारत में व्यायाम की उत्तम दशा होनी चाहिये।

शिक्षकों द्वारा नैतिक मूल्यों की पुनर्स्थापना वर्तमान समय की माँग

जयनारायण व्यास विश्वविद्यालय शैक्षिक संघ जोधपुर द्वारा दिनांक 1 अक्टूबर 2016 को संगोष्ठी आयोजित की गयी, जिसमें मुख्यवक्ता श्री महेन्द्र कपूर, संगठन मंत्री, अ.भा.रा.शै. महासंघ एवं अध्यक्षता प्रो. आर.पी. सिंह कुलपति, जयनारायण व्यास विश्वविद्यालय, जोधपुर ने की।

संगोष्ठी में मुख्यवक्ता के रूप में उद्बोधन करते हुए श्री महेन्द्र कपूर ने अ.भा.रा. शैक्षिक महासंघ के कार्यक्रमों, कर्त्तव्य बोध दिवस, वर्ष प्रतिपदा, गुरुवंदन, शिक्षा भूषण सम्मान आदि पर प्रकाश डाला तथा सम्मानित शिक्षकों श्री दीनानाथ बत्रा, संस्कृत में श्रीमती मंजुश्री रहालकर, डॉ. भानुदास मांडे आदि के बारे में बताया। उन्होंने शिक्षा-भूषण सम्मान प्राप्त डॉ. जी.एस. मुडम्बडित्ताया, डॉ. पी.एल. गावड़े, ताई इन्दुमति काटदरे आदि के योगदान की भी चर्चा की। राष्ट्रीय परिप्रेक्ष्य में बोलते हुये उन्होंने महिलाओं के साथ व्यवहार को परिवार और वात्सल्य की पारंपरिक भावना के साथ देखने की बात कही। समाज में मूल्यों की स्थापना के लिये उन्होंने आचार्य चाणक्य, सान्दीपन आदि गुरु परंपरा के योगदान की चर्चा करते हुये आज के युवकों को मधु कोडा और सुरेश कलमाडी का अनुसरण न करने की सलाह दी।

श्री महेन्द्र कपूर ने अ.भा.रा.शैक्षिक महासंघ के राष्ट्रीय स्तर पर भूमिका के रूप में श्रीमती स्मृति ईरानी, तत्कालीन मंत्री एवं वर्तमान मानव संसाधन विकास मंत्री श्री प्रकाश जावडेकर जी के साथ बैठक होने तथा आने वाले समय में केन्द्रीय मंत्री श्री प्रकाश जावडेकर सहित यूजीसी एवं उच्च शिक्षा सचिव के साथ अक्टूबर मास में विभिन्न विसंगतियों पर चर्चा करने की बात कही।

संगोष्ठी में शिक्षकों के लिये खुला सत्र भी रखा गया। जिसमें डॉ. ओ.पी. देवासी प्रो. एस. के. परिहार, प्रो. कैलाश डागा, डॉ. विकल गुप्ता, श्रीमती चन्दन बाला, प्रो. ललित गुप्ता, डॉ. हीरा राम, डॉ. विजय मेहता, डॉ. रिछपाल सिंह, डॉ. के.एम शर्मा ने विचार व्यक्त किये। वक्ताओं ने नये संस्थानों में गुणवत्ता कायम रखने, शिक्षकों की विभागीय पदोन्नति करने, वेतनमान बकाया, एपीआई प्रणाली, पीएच.डी. प्रवेश परीक्षा के पाठ्यक्रम में एकरूपता, शिक्षक-छात्र अनुपात, छात्र प्रतिनिधि चुनाव, शिक्षकों के अधिकार और कर्तव्यों के विषय में चर्चा की।

प्रो. आर.पी. सिंह, कुलपति जयनारायण व्यास विश्वविद्यालय, जोधपुर ने अध्यक्षीय उद्बोधन करते हुये जयनारायण व्यास विश्वविद्यालय शैक्षिक संघ का अ.भा.रा.शै. महासंघ के संगठन मंत्री श्री महेन्द्र कपूर से संवाद का अवसर देने के लिये धन्यवाद दिया। इन्होंने अ.भा.रा.शै. महासंघ ने बहुत सी राष्ट्रीय समस्याओं पर अपनी प्रतिक्रिया देने के लिये एवं नयी शिक्षा नीति के निर्माण कर समस्याओं के समाधान की आवश्यकता पर बल दिया। डॉ. विमल गुप्ता ने धन्यवाद ज्ञापित किया। संगोष्ठी में जयनारायण व्यास विश्वविद्याय शैक्षिक संघ के बहुत से गणमान्य शिक्षक सम्मिलित हुए।

शिक्षक की निर्ममता पूर्वक हत्या पर शोक मग्न दिल्ली

दिल्ली के नागलोई स्कूल में कार्यरत श्री मुकेश कुमार पीजीटी हिंदी की 26 सितम्बर, 2016 को स्कूल में कुछ बच्चों ने बड़ी ही निर्ममता पूर्वक चाकू से हत्या कर दी। यह बच्चे कई दिनों से स्कूल नहीं आ रहे थे, श्री मुकेश कुमार जी का कसूर यह था कि वे इनके भविष्य की चिंता करते हुए इनके घर लगातार सूचना पहुँचा रहे थे कि कम उपस्थिति के कारण बारहवीं कक्षा में परीक्षा नहीं दे पाएंगे। उन्हें तुरन्त हॉस्पिटल ले जाया गया पर बचाया नहीं जा सका।

दिल्ली अध्यापक परिषद, दिल्ली ने सभी शिक्षकों को छुट्टी लेकर नागलोई 10:00 बजे पहुँचने का आह्वान किया अगले दिन 10:00 बजे से लगभग 4:30 बजे तक धरना प्रदर्शन रहा। लगभग 10 हजार की संख्या में शिक्षक आए हुए थे।

श्री मुकेश कुमार पीजीटी हिंदी की निर्मम हत्या पर दिल्ली अध्यापक परिषद ने अपनी शोक संवेदना प्रकट करते हुए सरकार से और शिक्षा विभाग से कहा कि दिल्ली में शिक्षकों से दुर्व्यवहार और मारपीट की अनेक घटनाएँ हो चुकी हैं पर अभी तक कोई ठोस फैसला नहीं लिया गया। उनका यह बलिदान शायद शिक्षा तंत्र को ठोस नीति बनाने और निर्णय लेने को मजबूर करे।

दिल्ली अध्यापक परिषद ने इस घटना की घोर निंदा करते हुए सरकार से निम्न मांग की –

1. परिवार को आर्थिक सहायता के रूप में एक करोड़ रुपया तुरंत दिया जाए।
2. कम से कम एक आश्रित को नौकरी/ रिटायर्ड उम्र तक पूरी तनखाह, बाद में पेंशन की व्यवस्था करे।
3. श्री मुकेश कुमार को शहीद का दर्जा दिया जाये।
4. सच्ची श्रद्धांजलि के लिए विद्यालय का नाम शहीद मुकेश कुमार के नाम पर रखा जाये।
5. दोषियों को कड़ी से कड़ी सजा मिले जिससे दूसरों को भी सबक मिले।
6. विद्यालयों में भयमुक्त वातावरण एवं अध्यापकों की सुरक्षा के लिए गार्डों की नियुक्ति हो
7. सभी विद्यालयों में पब्लिक स्कूलों की तरह एक काउंसलर नियुक्त किया जाये।
8. एस.एम.सी. में क्षेत्र के शिक्षाविद (रिटायर्ड) लिए जाएँ।

जिसमें से एक माँग 1 करोड़ रुपया परिवार को देने की मंजूरी भी मिल गई।

अगले दिन पुराना सचिवालय भी शिक्षकों को संबोधित करते हुए श्री जय भगवान गोयल,अध्यक्ष दिल्ली अध्यापक परिषद ने सभी से अपने क्षेत्र में रोष प्रकट करने, अभिभावकों को जागरूक करने का आह्वान किया। राजकीय निकाय ने कई जिलों में रैली निकाली। इसी कड़ी में 28 सितम्बर, 2016 को सहायता प्राप्त निकाय ने एक दिन काली पट्टी बांधकर रोष प्रकट किया। 29 सितम्बर, 2016 के एनडीएमसी निकाय के साथ जंतर मंतर पर एक प्रदर्शन कर प्रधानमंत्री कार्यालय को ज्ञापन देने का निश्चय किया।

दिल्ली अध्यापक परिषद का प्रतिनिधिमंडल मानव संसाधन विकास मंत्री से मिला

दिनांक 29 सितम्बर, 2016 को मानव संसाधन विकास मंत्री श्री प्रकाश जावड़ेकर जी से दिल्ली अध्यापक परिषद दिल्ली का एक प्रतिनिधिमंडल अध्यक्ष जयभगवान गोयल के नेतृत्व में दिल्ली के शिक्षकों की विभिन्न मांगों के सन्दर्भ में मिला। शिक्षकों की वर्षों से लंबित समस्याओं के विषय में इस अवसर पर सघन विचार विमर्श हुआ। इनमें से अनेक मुद्दे जैसे नियमित शिक्षकों की भर्ती करने शिक्षक सेवानिवृति की आयु 65 वर्ष करने, छठे वेतन आयोग की लंबित विसंगतियों को दूर किए जाने, पुरानी पेंशन पालिसी को फिर से लागू करने एवं पाँचवी तक की शिक्षा को मातृभाषा में दिए जाने के सन्दर्भ में निर्णायक सहमति बनी। अभी कुछ समय पहले राजकीय निकाय के एक शिक्षक मुकेश कुमार की हत्या के सन्दर्भ को गंभीरता से लेते हुए आवश्यक सुरक्षा की व्यवस्था का आग्रह किया गया एवं शिक्षा की निरंतर गिरते स्तर को गंभीरता से लेते हुए no detention policy को समाप्त किये जाने का आग्रह किया। श्री प्रकाश जावड़ेकर जी ने माँग पत्र की अन्य सभी मांगों पर भी सहानुभूतिपूर्वक विचार करने का आश्वासन दिया। इसके पश्चात् वेतन आयोग में शिक्षकों से सम्बंधित विसंगतियों के सन्दर्भ में माननीय प्रकाश जावड़ेकर जी के निर्देश पर संयुक्त सचिव, स्कूली शिक्षा श्री मनीष गर्ग के साथ विभिन्न मुद्दों पर विस्तार से चर्चा हुई। परिषद् द्वारा बताया गया कि उन्नयन करने के बाद भी शिक्षकों को छठे वेतन आयोग में न्यूनतम वेतन कम दिया गया। इसके साथ ही छठे वेतन आयोग में अर्जित अवकाश के साथ– साथ मेडिकल लीव भी दिए जाने का प्रावधान किया गया था पर गत व्याख्या के कारण या तो केवल हाफ पे लीव लीव दी गई या केवल अर्जित अवकाश। शिक्षकों के लिए बारह आकस्मिक अवकाश दिए जाने की भी माँग की गई क्योंकि शिक्षकों का छह कार्य दिवसों का सप्ताह होता है।

छत्तीसगढ़ प्रान्त का प्रान्तीय अधिवेशन सम्पन्न

अखिल भारतीय राष्ट्रीय शैक्षिक महासंघ छत्तीसगढ़ प्रान्त के उच्च शिक्षा संवर्ग का प्रान्तीय अधिवेशन दिनांक 11 सितम्बर 2016 को छत्तीसगढ़ की राजधानी रायपुर में आयोजित किया गया। अधिवेशन में राज्य के 5 विश्वविद्यालयों- पं. रविशंकर शुक्ल विश्वविद्यालय रायपुर, बिलासपुर विश्वविद्यालय बिलासपुर, सरगुजा विश्वविद्यालय अम्बिकापुर, बस्तर विश्वविद्यालय जगदलपुर एवं दुर्ग विश्वविद्यालय दुर्ग के अलावा 40 महाविद्यालयों के प्राध्यापकों ने भाग लिया।

कार्यक्रम के मुख्य अतिथि के रूप में छत्तीसगढ़ राज्य के उच्च शिक्षा मंत्री माननीय प्रेम प्रकाश पाण्डेयजी उपस्थित थे। कार्यक्रम में मुख्य रूप से प्रो. जे.पी. सिंघल जी कुलपति राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर, श्री महेन्द्र कपूर राष्ट्रीय संगठन मंत्री अखिल भारतीय राष्ट्रीय शैक्षिक महासंघ तथा प्रो. एस.के. पाण्डेय कुलपति पं. रविशंकर शुक्ल विश्वविद्यालय रायपुर एवं प्रो. बी.एल. शर्मा कुलपति सरगुजा विश्वविद्यालय अम्बिकापुर उपस्थित थे। कार्यक्रम में मुख्यवक्ता के रूप में बोलते हुए प्रो. जे.पी. सिंघल जी ने कहा कि नई शिक्षा नीति ऐसी होनी चाहिये जिसमें राष्ट्रीयता हो और हम शिक्षा के माध्यम से एक अच्छे मानव बन सकें। साथ ही उन्होंने कहा कि हम शिक्षकों को अपने नैतिक एवं जीवन मूल्यों को सर्वोपरि रखकर कार्य करने की आवश्यकता है जिसमें हमारे समाज एवं राष्ट्र की पूरे विश्व में एक अलग छवि बन सके। हमें अपने नैतिक मूल्यों एवं कर्तव्यों को कभी वेतन से जोड़कर नहीं देखना चाहिये।

मुख्य अतिथि की असंदी से बोलते हुए राज्य के उच्च शिक्षा मंत्री माननीय प्रेम प्रकाश पाण्डेय जी ने कहा कि मुझे यह जानकर प्रसन्नता एवं गर्व हो रहा है कि यह संगठन राष्ट्र को सर्वोपरि रखकर देश में कार्य कर रहा है। उन्होंने देश एवं प्रदेश के युवाओं को आह्वान करते हुए कहा कि केवल शिक्षा प्राप्त करने भर से नौकरी प्राप्त नहीं हो सकती बल्कि युवाओं को शिक्षा के साथ-साथ टेक्नीकल ज्ञान की भी आवश्यकता है। माननीय प्रधानमंत्री जी युवाओं के लिये कौशल विकास योजना एवं स्टेण्डअप इंडिया कार्यक्रम देशभर में चला रहे हैं जो युवाओं के लिये एक अच्छा अवसर है।

प्रान्तीय अधिवेशन में पं. रविशंकर शुक्ल विश्वविद्यालय शैक्षिक संघ इकाई का भी गठन किया गया। इकाई में सर्वसम्मति से प्रो. चन्द्रशेखर चौबे (अध्यक्ष), प्रो. तपेश गुप्ता (महामंत्री) के अलावा प्रो. एस.एस. भदौरिया, प्रो. ब्रह्मानन्द मारकण्डे, डॉ. स्नेहलता सराफ, डॉ. कल्पना लाम्बा को (उपाध्यक्ष) एवं श्री जय नारायण वर्मा (कोषाध्यक्ष) तथा वी.पी. त्रिपाठी को (कार्यालय मंत्री) बनाया गया है।

कार्यक्रम में अखिल भारतीय राष्ट्रीय शैक्षिक महासंघ छत्तीसगढ़ प्रान्त के उच्च शिक्षा के संयोजक डॉ. आर.डी. शर्मा ने अतिथियों का स्वागत एवं अभिनंदन किया।

अ.भा.राष्ट्रीय शैक्षिक महासंघ माध्यमिक शिक्षा संवर्ग की बैठक सम्पन्न

अखिल भारतीय राष्ट्रीय शैक्षिक महासंघ के माध्यमिक संवर्ग की बैठक 23 सितम्बर, 2016 को डोल आश्रम जिला अल्मोड़ा, उत्तराखंड में माध्यमिक संवर्ग के उपाध्यक्ष डॉ अशोक कुमार सिंह की अध्यक्षता एवं राष्ट्रीय संगठन मंत्री श्री महेंद्र कपूर, सह संगठन मंत्री श्री ओम पाल सिंह तथा अतिरिक्त महामंत्री प्रो. के. बालकृष्ण भट्ट के सानिध्य में सम्पन्न हुई।

संवर्ग के राष्ट्रीय सचिव मोहन पुरोहित ने बताया कि सर्वप्रथम 13 जून 2014 को हरि नगर, दिल्ली में विगत बैठक की कार्यवाही का अनुमोदन कराया गया। इस बैठक में 15 राज्यों के 79 पदाधिकारी उपस्थित हुए। संवर्ग की बैठक में देश भर के राज्यों की समस्याओ का संकलन किया गया।

छठे वेतनमान की विसंगतियों के निराकरण के लिए व्यापक चर्चा हुई। साथ ही राष्ट्र व्यापी समस्याओं का संकलन किया गया।

समारोप सत्र में अतिरिक्त महामंत्री प्रो. के. बालकृष्ण भट्ट ने बताया की हम अनुभवी और जिम्मेदार कार्यकर्ता हैं अत: संघनिष्ठ कार्यकर्ता बन कार्य करना है। हमें अखिल भारतीय राष्ट्रीय शैक्षिक महासंघ जैसा अनोखा संगठन शिक्षा क्षेत्र में देखने को नहीं मिलेगा जो शिक्षक समाज और राष्ट्र हित के चिंतन को लेकर कार्य कर रहा है। डॉ. अशोक कुमार सिंह ने अध्यक्षीय उद्बोधन में बताया कि कुछ समस्याएँ सबके लिए है। उनका समाधान शिक्षक हित में करवाना नितांत आवश्यक है। अंत में माध्यमिक संवर्ग के सचिव मोहन पुरोहित ने सबका आभार प्रकट कर शांति मन्त्र से बैठक का समापन किया।

Country Should Consider Education a Priority : KRMSS

There is a need to consider education a first priority to root out all the evils. It was the common opinion expressed by various scholars and academicians who participated in Round Table Discussion on Draft National Education Policy Organised by Karnatak Rajya Mahavidyalaya Shaikshik Sangh in collaboration with KLE's Technological University. The Vice Chancellor Dr Ashok Shettar opined that there should be more autonomy for higher education institutes in the country. He opposed the idea of creating Indian Education Services because it may lead to unnecessary interference. He said the use of ICT should be clearly defined. Professor SS Patagundi spoke on Structure of Public Universities. He stated that the appointments of VCs and Teachers should be free from political interference. Dr Harish of Karnatak University spoke about the research and innovations. He emphasized the need for quality research. He advocated the need for 100 standard research centers in the country. Prof. Chachadi felt the need for spending 6.5% of GDP on education in the country. He laid emphasis on appointments in Higher education. Dr Gopal Joshi spoke on Faculty development and recocommeded continuous evaluation and performance of faculty. Mr Vinay Bidari of ABVP spoke about movements of ABVP demanding quality higher education in the country. Prof. N A Upadhye and Prof . Prasanna Pandhari spoke about the issues of Funding of Higher education and felt the need for increase in the budget outlay for Higher education. Dr. Gurunath Badiger welcomed the gathering and proposed vote of thanks. Prof. Manvalli, Raghunandan, Dr. Y M Bhajantri, Dr. Uma Jadarmakunti, Dr Sandeep Budhihal and others were present.

MSVSS Executive Meets Education Minister

MSVSS executives and our national Executive Member, have put forth the issue and concern related to the teachers at The M.S.Uni, with a straight forth approach to Hon. Min. Of Education Shri Bhupendra Sinh Chudasam. He assured about resolving the issues at the GOG level.

Teachers Representatives were given a serious hearing with a positive note that all the concerns of the teachers shall be addressed at earliest to benefit the teaching community.

We would like to share that following points were discussed:

1. Verification of the CAS of teachers by account deptt. at Gandhinagar.

2. Oriental institute teachers issues.

3. Faculty of Technology and Engineering : Clearance of the CAS of teachers for stage I to 2 Stag II to III and onward, by the verification and accounts officer at GOG

4. PhD increment recovery and arrears of affected teachers, whose 6th pay arrears have been held up by uni. due to delima of interpretation of Judgement of Hon.High Court.

Hon. Min. Has given a very positive assurance to resolve all the issues at earliest.

राजस्थान शिक्षक संघ (राष्ट्रीय) कोटा महानगर की शिक्षक महिला संगोष्ठी सम्पन्न

राजस्थान शिक्षक संघ (राष्ट्रीय) द्वारा 3 सितम्बर 2016 को कोटा महानगर इकाई द्वारा महिला शिक्षक संगोष्ठी घटोत्कच चौराहे पर स्थित आदर्श राजकीय उच्च माध्यमिक विद्यालय, महावीर नगर तृतीय, कोटा में सम्पन्न हुई।

संगोष्ठी के मुख्य अतिथि राजस्थान शिक्षक संघ (राष्ट्रीय) के प्रदेश महामंत्री देवलाल गोचर ने कहा कि शिक्षक महिलाओं से संगठन में अपनी भागीदारी निभाते हुए संगठन में कार्य करने को कहा। गोचर ने शिक्षक महिलाओं से प्राणपण व निष्ठा के साथ आगे आने को कहा तथा महिलाओं की भागीदारी से संगठन को शिखर तक पहुँचाने को कहा। उन्होंने शिक्षक महिलाओं से उनकी समस्या के समाधान करने हेतु अपने अधिकारों एवं कर्त्तव्य के प्रति जागरुक रहने को कहा।

महिला संगोष्ठी की अध्यक्षता कर रही संघ की संभाग महिला संगठन मंत्री निर्मला जायसवाल ने महिला शिक्षिकाओं से संगठन में बढ़-चढ़कर भाग लेने को कहा तथा संगठन के कार्यक्रमों में हमेशा अपनी उपस्थिति देने को कहा। संगोष्ठी में संघ के जिलाध्यक्ष दिनेश कुमार स्वर्णकार, जिला महिला मंत्री सुनीता तिवारी, संघ के कोटा महानगर अध्यक्ष रमेश चन्द्र गौतम लुहावद, कोटा महानगर मंत्री हरिशंकर मीणा ने भी संगोष्ठी में अपने विचार व्यक्त किये।